

भारत की आध्यात्मिक कथाएं

(जयेंजी से अनूदित)

सकलनकर्ता
चमन लाल

अनुवाद
नरेन्द्र मोहन

चित्रावन
पी० खेमराज

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

प्रथम संस्करण आश्विन 1906, धनुष्य 1984

मूल्य 7 00 रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार,
पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित ।

विश्रय केन्द्र ● प्रकाशन विभाग

- सुपर बाजार (दुधरा मजिल) मनाट सक्क, नई दिल्ली 110001
- वामस हाउस, बरीमभाई रोड चानाडपायर, बम्बई 400038
- 8, एस्पेनेट ईस्ट बलरत्ता-700069
- एल० एल० ए० आडीटोरियम, 736 मन्नासल, मद्रास 600002
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग अनाम राजपथ पटना 800004
- निवट गवर्नमेंट प्रेस, प्रेस राड, त्रिवेन्द्रम 695001
- 10-बी, स्टेशन राड, लखनऊ-226001
- स्टेट आर्किवाजिवल म्यूजियम बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन, हैदराबाद 500004

प्रबंधक भारत सरकार मुद्रणालय फरानाबाद द्वारा मुद्रित ।

प्राक्कथन

अर्नेस्ट रूहीम ने "केबिल्स, ईसप और अय कथाएँ" नामक अपनी पुस्तक की भूमिका में सही ही लिखा है कि "हमें यह स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि विश्व की श्रेष्ठतम कथाओं का उद्भव ईसप से ही अथवा यूनान में ही नहीं हुआ, वस्तुतः इनका प्रारंभ भारत में हुआ। इस देश की हितोपदेश जैसी पुस्तक में कथा के बीच कथा देखकर सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यहाँ कथाओं की परम्परा कितनी प्राचीन है।"

सृष्टि की रचना के समय स्रष्टा ने प्रत्येक राष्ट्र को कोई न कोई विशेषता प्रदान की। भारत भूमि को उसने विद्वत्ता प्रदान की। उपनिषद् तो भारत की विद्वत्ता का उज्ज्वल उदाहरण ही है। प्रस्तुत पुस्तक में सर्वांगित कथाएँ विद्वत्ता से परिपूर्ण हैं। इन कथाओं में पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि ईश्वर में मन्वी आस्था से क्या-क्या चमत्कार हो जाते हैं। इन कथाओं से यह भी पता होता है कि सृष्टि के रचयिता हमें क्या सदेश देते हैं महिष्णुता और मानव मात्र के प्रति प्रेम भाव से क्या-क्या प्राप्त किया जा सकता है। प्रत्येक कथा उपदेशों से परिपूर्ण है। आज के युग में जब धातावरण में सबल भय व्याप्त है और परमाणु अस्त्रों के कारण मनुष्य भ्रमिन्त हो रहा है, ईश्वर में आस्था की कथाएँ पाठकों के मन में अदम्य साहस का मंचार करेंगी, एसा मेरा विश्वास है।

इनमें से अधिकांश कथाओं का सफल और अनुवाद मन अपने मागदशन हेतु किया था क्योंकि सयासी का सदैव आत्म-सुधार का प्रक्रिया में रत रहना चाहिए। मुझे इससे लिए कोई श्रेय की भी कामना नहीं क्योंकि मधुमन्त्री की भाँति मने तो पुण्य में मधु का सग्रह मात्र ही किया था।

म उन लग्ना घोर प्रवाशर्वा का भी सुनिश्चित्यवाद बला है
 जिनकी कथाया जो मीर इस गवला म सम्मिलित बिया है । ह्यमा
 प्रभायानद वृत्त भागवा]म वृत्त कथाया का प्रवाशित बला का सम्मति
 प्रगत कर्म के लिए अक्षिणी बेनीपोनिया की बेनान्त गानायटी का म
 निगम म्म से आभारी है ।

—रमा लान

अनुक्रम

	पृष्ठ संख्या
सत्य की महिमा	1
सौता की अग्नि परीक्षा	8
निष्ठा, भक्ति और समर्पण	17
कृष्ण का जन्म	19
धामनाबतार की कथा	23
ईश्वर सदा सहाय है	29
कौन ऊँचा, कौन नीचा	33
नास्तिक	36
महात्मा बुद्ध की शिक्षा	39
सब अपनी-अपनी जगह थोड़ा ह	43
देवयानी और कच	47
ययाति	53
चित्रकेतु की कथा	57
क्षमाशीलता	62
मायावी सरोवर	67
राजा शिवि की कथा	75
चंद्रमा में खरगोश	79
अनुसरणीय चरण चिह्न	
(1) पावती की अनुकंपा	82
(2) मा का हृदय	84
(3) सुख-दुःख का साथी	86
(4) मानसिक सतुलन की परीक्षा	88
(5) श्वेत शिशु हाथी	90

सत्य की महिमा

एक सत्यवादी और धर्मपरायण राजा था। उसकी राजधानी में यदि कोई साधारण व्यक्ति अनाज, कपड़ा या अन्य कोई चीज बेचने के लिए जाता और उस सूर्यास्त से पहले न बेच पाता तो राजा उन चीजों का खरीद लेता था। जनता की भलाई के लिए राजा की यह प्रतिभा थी जिसका वह हमेशा पालन करता था। सूर्यास्त होने के तत्काल बाद राजा के सेवक शहर में जाते और यदि वे किसी को बेचने लायक चीजें लिए बड़े देवते तो उससे पूछताछ करने और ठीक-ठाक मूल्य चुका कर उसका सारा माल खरीद लेते।

इस सत्यनिष्ठ राजा की सत्यप्रियता को परखने के लिए एक दिन धर्मराज स्वयं ब्राह्मण वंश में राजधानी में पहुंचे। उनके पास एक सन्दूक था जिसमें ऐसी फालतू और घरेलू चीजें पड़ी थी जिन्हें कबाड समझ कर फेंका जा सकता था। वे इस सन्दूक का लेकर विप्रेता की हैसियत से बाजार में बैठ गए। लेकिन कबाड कौन खरीदता। जब सध्या हो गई—तो राजा के सेवक रोज की तरह बाजार में गश्त लगाने लगे। बाजार में उन्हें वह ब्राह्मण सन्दूक लिए बठा दिखाई दिया। राजा के सेवक उस के पास पहुंचे और पूछा कि क्या उसकी चीजें बिक गई हैं? ब्राह्मण द्वारा 'नहीं' में उत्तर देना पर राजा के सेवक ने आगे पूछा कि वह सन्दूक में क्या चीज बेचने के लिए लाया है और उसका दाम क्या है? ब्राह्मण ने सन्दूक में पड़ा कबाड दिखा दिया और बताया कि इसका दाम एक हजार रुपये है। इस पर राजा के सेवक हसे और उन्होंने कहा, 'इस रद्दी माल का, जिसकी कीमत एक पैसा भी नहीं है, भला कौन खरीदेगा?' ब्राह्मण ने शांत स्वर में उत्तर दिया, 'अगर कोई नहीं खरीदता तो मैं इसे घर ले जाऊंगा। राजा के सेवक राजा के पास पहुंचे और सारी बात से उन्हें अवगत कराया। इस पर राजा ने उन्हें आदेश दिया कि वह ब्राह्मण को उनकी चीजें वापस न ले जाने दे।

उदान प्राणहृषिक कहा कि पाप बहुत भाव नय करके ब्राह्मण की तार्जे उचित दाम पर धरीत की जाए।

राजा के सबके उगी समय लोटे गेट धोर ब्राह्मण की उमका चीजा के मूल्य के तीर पर न गो रण्य दन या प्रणाय रखा। ब्राह्मण न एक हजार से एक पचा भी नम स्वीकार करा ग इकार कर दिया। राजा के सबका उ दम प्रणाय को पाप गो रण्ये तब ब्रह्मणा पर ब्राह्मण न इस भी धर्माकार कर लिया। ब्राह्मण के इस हठी ध्यवहार ग शुभ्य होकर कुछ गवन राजा के पाग दासारा तोट भ्राए धोर उनम धिवापत की कि ब्राह्मण धनन शत्रुन का, जिगम कपरा बबाड के निवा कुछ नहीं है पाप गो रण्य स्वीकार करा के निण भी धमार नहीं है। उहनि धनता मन ध्यवन करन हुए कहा कि इन चीजा को धरीत की कोई जरूरत नहीं है। राजा न उरें धननी प्रतियु की माद दिताई धोर कहा कि मैं किसी भी यजह ग धरने धचन म पाछ नहीं हटना पाहता। राजा न धादेश लिया कि ब्राह्मण की चीजा का उत्तर धार मांगी गद कीमत पर धरीद लिया जाए। राजा के सबके धनन स्वामी की इस जित पर हस धोर ब्राह्मण के पाग लोट भ्राए। उनम पाग ब्राह्मण को उत रदी माल के बदले एक हजार रण्ये देगे के अनाया दूमरा कोई विकल्प तहा था। ब्राह्मण ने यह राशि स्वीकार की धोर सुशी-धुशी चला गया। उधर राजा के सबके गदूत का राजा के पाग न ध्राण। राजा न सदन को महल म रखवा लिया।

उसी रान एक धत्यन सुतर स्वा जिनन बहुत धच्छी वेशभूषा धोर धाभूषण पहन रण्य ये धोर बहुत धच्छा शृंगार किया हुआ था, महल के मुख्य धार से बाहर निवली। राजा महल के बाहरी कमरे म धठा हुआ था। सुदरी का दधकर राजा न उमस पूछा धाप कौन हो? यहा किस लिण धाई थी धोर धन कहा जा रही हा। उम स्त्री ने बताया कि "मैं लक्ष्मी हूँ धोर धूवि धाप सत्यनिष्ठ धोर धमपरायण ये इतलिण धुरू से ही म धापक महल मे निवास कर रहे थी। लेकिन धन मातूम हुआ है कि बूडे-बवाड के रूप म दरिद्रता मुख्य धार म राजमहल मे प्रवेश कर धाई है। ऐसे स्थान पर जहा दरिद्रता का वाम हा मैं नहीं रह सवती। इसी कारण मैं ध्राज हूँ। राजमहल का धाडकर जा रही हूँ।" राजा न उसे रोकने का कोई प्रयत्न नहीं किया धोर जान दिया।

थोड़े समय बाद राजा न एक सुन्दर युवक का महल से निकलते देखा। उसने युवक से भी वही प्रश्न किया। युवक न उत्तर दिया कि वह दान का देवता है। राजा के सत्यनिष्ठ और धर्मपरायण होने के कारण वह प्रारम्भ से ही राजमहल में रह रहा था। लक्ष्मी के महल छोड़ जाने के बाद यहाँ के साधन नहीं रहे जिससे कि राजा दान कर सके इसलिए वह वहीं ना रहा है जहाँ लक्ष्मी गई है। राजा ने कहा "यदि तुम जाना चाहते हो तो जाओ।"

इसके बाद एक और सुन्दर पुरुष आश्रित महल से बाहर निकलता हुई दिखाई दी। राजा ने उससे भी वैसे ही पूछा तो उस आश्रित ने कहा कि यह सदाचारण है। उसने बताया कि "चूँकि आप एक सत्यवादी और गुणवान शासक हैं, इसलिए मैं आपके महल में उस दिन मैं निवास कर रहा था जिस दिन मैं आपका शासन की बागडार सभाला था। लक्ष्मी और दान के देवता द्वारा आपका घर छोड़ दिए जाने पर, उनका अनुपस्थिति मैं आप सदाचारण पर कायम नहीं रह सकेगे, इसलिए मैं भी उन्हीं का अनुसरण कर रहा हूँ।" राजा ने कहा, "ठीक है, जाओ।"

कुछ समय पश्चात् एक अग्र्य युवा आश्रित महल के मुख्य द्वार पर दिखाई दे। राजा द्वारा पूछने पर उसने बताया, मैं यश का साकार रूप हूँ। जयसे आप सिंहासन पर बैठे तबसे मैं आपके महल में निवास कर रहा था। अब लक्ष्मी, दान-देवता और सदाचारण द्वारा महल छोड़ दिए जाने पर आप अपना यश नहीं बनाए रख सकेगे इसलिए मैं जा रहा हूँ।" राजा ने उसे भी जाने दिया।

इसके थोड़े समय बाद एक अग्र्य युवक महल से बाहर निकला। राजा के पूछने पर उसने वही कहानी दोहरा दी। उसने राजा का बताया, मैं मूर्तिमान सत्य हूँ और आपके शासन-काल के प्रारम्भ से ही मैं महल में ठहरा हुआ था। पर महल से लक्ष्मी दान सदाचारण और यश के चले जाने के बाद मैं भी उन्हीं का अनुसरण कर रहा हूँ। यह सुनकर राजा ने युवक से कहा 'सत्य की खातिर ही मैंने उन सभी देवताओं का जिनका सत्य न उल्लेख किया है, अपने अपने रास्ते जान दिया था। पर चूँकि सत्यनिष्ठा को मैंने कभी नहीं छोड़ा इसलिए यादसगत यहाँ है कि सत्य मुझे छोड़कर न जाए।' राजा ने उसे बताया कि उसने

जाहित म यह पावा प्रतिगा न, थीं कि राजधान, म ना भं, व्यक्ति कोई चीज बेचा के लिए लाएगा भार मूर्खान्त म पूव उस बेच नहीं पाएगा, उमन सारे सामान का राजा स्वयं खरीने लेगा। राजा म मत्य स धागे कहा—'भ्राज ही एक ब्राह्मण कुछ बचाव बेचने के लिए ल धाया था जिसका बीमा एक पैसा भी नहा था पर बेचने समर्थिष्ठा की खातिर मने दक्षिणा का प्रतीक यह रही मालएक हजार रुपया मूल्य चुका कर खरीने लिया।' राजा म धनन, बात जारी रखत हुए कहा, 'इस पर लम्बी मरे पाग धाई भार मुझम यानी कि पूरि दक्षिणा ने महन म देगा टाल लिया है, इसलिए यह महा नहीं रहेगा। इमी कारण सदर्भ, भार उसकी मगति म धन्य देवता एक के धाएँ एक मुझ छोट कर धन गए हैं। इम समय मापजू म धनी प्रतिष्ठा पर धटल हूँ।' यह पना खती पर कि कयल सत्य की खातिर राजा म धन्य सभी देवतामा का जाने की धनुमति द दी थी मत्य म धनना विधान बन्ना निमा धौर महन म रहने का निणम लिया।

याडा ही समय बीता हुआ कि या राजा के पाग लीट धाया। राजा के पूछने पर उमने बताया कि यह मौन है। उमन कहा कि धानमी नैतिक तौर पर रिक्तता ही मही दानशील धौर धना क्या न हो उस मत्यनिष्ठा के बिना प्रतिष्ठा नहीं मिल सकती। उसन धनने निणय के धार म बताया कि जहा मत्य है वही यह ठहरगा। राजा ने उसन निणय का स्वागत किया।

इमने बाद सदाधरण राजा के पाग धाया। राजा के पूछने पर उमन अपना परिचय दिया धौर कहा कि सदाधरण कहा ठहर सकती है जहा सत्यवादिता है। कोई कितना हा दानवीर धौर धना क्या न हो मत्य के धभाव म उसक नतिन हा का प्रभन ही नहीं उठता। सदाधरण न धागे कहा कि पूरि राजा म सत्य का निवास है, इसलिए वह भी राजा के पाम रहेगा। राजा ने उसका स्वागत किया।

धाडे समय बाद दान का देवता भी लीट आया। राजा के पूछने पर उमने भी अपना परिचय दिया धौर कहा कि दान कहा रह सकती है जहा मत्य हा। चाहे कोई कितना ही धनी हो, वह तब तक दानशील नहीं हा सकता जब तक कि वह सत्य के प्रति समर्पित न हो। दान देवता ने राजा की सत्य के प्रति निष्ठा के लिए उसकी प्रशंसा की धौर बताया कि



उमन राजा के पास लौट आता था निगम किया है। राजा ने कहा—
'ठीक है। और महल में उमन प्रवेश का स्वागत किया।

तब धर्मराज स्वयं आग्रहण के वश में राजा के सामने उपस्थित हुए। राजा द्वारा उगी तरह पूछे जाते पर, उन्होंने राजा का बताया कि यह धर्म के दायता है तथा आगे कहा कि उन्होंने ही राजा का एक हठार के मूल्य पर बचाव किया था। उन्होंने स्वीकार किया कि राजा ने अपने गत्यपिष्टा के गुणा के कारण उन्हें जीत लिया है और अब इस वश में वह उमरी इच्छानुसार घराना देने के लिए आए हैं। उन्होंने राजा से पूछा कि वह क्या कि वह उमन लिए क्या कर सकते हैं। राजा ने धर्मराज के प्रति आभार व्यक्त किया और कहा कि उस कुछ नहीं चाहिए।

इस वया में यह बात बिना किसी तरह के स्पष्ट हो जाती है कि जहां गय है वहां अथ गभी घराना स्वयंसेवक और निरन्तर उपस्थित रहते हैं। इस गुण के समया में यदि किसी समय धन-गमायति, दान, नैतिकता और यश का अभाव हो भी जाए तो हताशाहित नहीं होना चाहिए। मत्स्य का भाग न छानने से वे सभी अपने आप निश्चित रूप में लौट आते हैं। यदि वे पुन प्राप्त नहीं भी होते, तो भी मनुष्य की कोई हानि नहीं होती बल्कि उस सर्वोच्च लाभ—सत्यनिष्ठा के रूप में अथवा प्राप्त होना है। इसलिए ईश्वरीय श्रुति या परमानन्द के जिनागु को किसी भी हालत में सत्य का छोड़ना नहीं चाहिए बल्कि सत्य का निस्वार्थ भाव से निरन्तर और तदनुसार पालन करना चाहिए।

सत्य या सत्यवादिता—मत्स्य वाचनना अर्थात् गुणा का अर्जित करना और गमावर्णन मत्स्य या सत्यवादिता के ही लक्षण हैं। भगवान् श्रुति ने गीता में कहा है —

सदभावे साधुभावे च सवित्येतत्प्रयुज्यते ।

प्रशस्ते कर्माणि तथा सच्छब्द पाप युज्यते ॥ 26 ॥

यत्ने तपसि दाने च स्थिति सदिति चोच्यते ।

कर्म च व तवर्षीय सवित्येवाऽभिधीयते ॥ 27 ॥

(7वा अध्याय)

हे अर्जुन! सदभाव साधुभाव में और मांगलिक कर्मों में सत्य का प्रयोग किया जाता है। हे अर्जुन! यत्न, तप और दान में जो स्थिति है

वह 'सत' शब्द स कही जाती है और उसने निमित्त जो काम किए जाते ह वे भी सद् कहलाते हैं।

हिन्दी की एक लोकप्रिय उक्ति इस प्रकार है—'हे ईश्वर कः भक्त । सत्य माग को किसी भी हालत मे छोडना नही चाहिए । सत्य को छोड देने से तुम्हारा श्रेय निश्चित रूप से नष्ट हो जाएगा। सत्य के प्रति एवनिष्ठ ाय से भ्रष्टाई तौर पर छिन गई धन-सम्पत्ति वापस मिल जाती है ।'

सीता की अग्नि-परीक्षा

राम सीता को देखने के लिए उत्पलित हो उठे थे। वे उग्र मधुरता की अपने हृदय में पुनः अनुभूति करना चाहते थे जो मधुरता उनसे उग्र निश्चिन्ता गई थी जब वे सीते के हिरण को पकड़ने के लिए निकले थे। पर वे अग्र भावों में बह जाने वाले या दार्शनिक और अवस्थात पैदा हो जा वाली दृष्टात्मा के शिवार हो जाने वाले नरकर जीव मात्र नहीं थे। उन्होंने साक्षात् कि सीता के साथ अपने पुनर्मिलन को निरापन्न बनाने के लिए यह भावशक्त है कि यह मिलन सभी के सामने हो और पत्नी के सम्मान और उनके प्रति उसकी निष्ठा का प्रमाण सभी को मिल जिससे कि जामानस्य में सीता की सच्चरित्रता के बारे में कोई भ्रम पैदा न हो। सीता का हित भी इसी बात में है कि प्रजाजनों का भी उनके प्रति प्रेम और अटूट विश्वास हो। राम की प्रसन्नता भी इसी बात में हो सकती थी कि सीता को संदेह और भ्रमना से पर और ऊपर समझा जाए।

परन्तु सबसे पहला काम जो उनके सामने था, उसका इन प्रस्तावों से कोई सम्बन्ध नहीं था। इस समय वे एक विजैता सेना का नेतृत्व कर रहे थे। उनका पहला दायित्व यह था कि नगर को, नगर की स्त्रियाँ, बच्चे तथा धन-सम्पत्ति को अपनी ही सेनाओं द्वारा लूट-पाट से सुरक्षित रखें। इसलिए उन्होंने तत्काल विभीषण को लवा का राजा घोषित किया और उन्हें गद्दी पर बठा दिया। तत्पश्चात् उन्होंने गौपनीय ढंग से हनुमान को अपने पास बुलाया और उनसे कहा कि वे नग्न राजा की अनुमति प्राप्त करके नगर में प्रवेश करें और स्वयं सीता को उनकी विजय के बारे में बताएं।

उन्होंने विभीषण से औपचारिक रूप से प्रार्थना की कि वे कौशल का राजा को स्वयं अपने साथ उनकी उपस्थिति में लाएं। राज्य के ऐसे समारोहों के अनुरूप सीता को राजसी वेश भूषा में तथा हीरे-जवाहरात पहने हुए ही भाना था। सीता का प्यार से भरा हुआ हृदय उसे प्रेरित कर रहा था कि वह इसी हालत में, अपने कारावास के कपड़ों में, उड़कर अपने पति के चरणों में पहुँच

जाए। परन्तु विभीषण ने उनके पति द्वारा अभिव्यक्त इच्छा की विनम्रतापूर्वक याद दिलाई और सीता ने तत्काल राजसी वेशभूषा पहनना स्वीकार कर लिया। सचमुच, राजकुमारियों का जीवन पथ बहुत कठिन होता है। एक-एक पग उठाती हुई, अपने [हृदय के भावों को धामें, सीता अपने पति के पास जाने के लिए धागे बढ रही थी।

रानी तैयार होकर उस पालकी में बठी जिस पर लाल और सुनहरी झालरें लटक रही थी। इस पालकी में बैठकर उन्हें राम के पास पहुंचना था। धागे धागे चल रहे विभीषण को उनके आगमन की घोषणा करनी थी। नगर के प्रवेश द्वार पर यह प्रायना की गई कि वे पालकी से उतर कर शिविर तक का रास्ता पैदल तय करें। सीता इसका आशय न समझ सकी। राम के दशन करने के विचारों में वे इतना खोई हुई थी कि इन छोटी छोटी बातों पर सोचने की उन्हें फुरसत नहीं थी। सीता पालकी में अपनी जगह से उठी और चौड़े रास्ते पर बाहर आ गई। रास्ते में दाएँ और बाएँ, उन्हें घरे हुए सनिक खड़े थे। सामने राम विराजमान थे—गम्भीर और भव्य मुद्रा में, सभासदा के साथ। सभी की आँखें सीता पर ठहरी हुई थी। उन्हें वचन से लेकर अब तब खुले आम नहीं देखा गया था। विभीषण को स्वभावतः महसूस हुआ कि इससे, सकाचशील और सवेदनशील रानी को उलझन होगी। इसलिए वे भीड़ का चल जान का आदेश देन ही न थे। वे जिससे कि एकांत में राम और सीता का मिलन हो सके, तभी राम ने उन्हें हाथ के संकेत से राक दिया। उन्होंने आदेश दिया “सभी को बैठे रहने दिया जाए। यह ऐसे अवसरों में से एक है जब समस्त ब्रह्माण्ड स्त्री के लिए ओढनी बन जाता है और निष्पाप भाव से कोई भी उसे देख सकता है।”

इस बीच, सीता धीमी और राजसी चाल में चलती हुई बटुन गमाग आ गयी थी। ऐसा लग रहा था मानो उनकी आँखें अपने पति के मुख का प्रत्येक भंगिमा और गति को भाप रही हों। राम सीता के स्वागत में उठे, पर सभी लोगों ने देखा कि वे सीता की ओर नहीं देख रहे, बल्कि अपने सिर को झुकाए हुए आँखों को नीचे किए हुए खड़े हैं। रानी विनयी मुन्दर थी। वे कितनी भय और सौम्य दिख रही थीं। रामका आभूषण में सजी होने पर भी, उन्हें देखने पर साफ लगता था कि वे धर और ठर हृदय वाली स्त्री हैं एक विनम्र और प्यारी पत्नी हैं, और फिर भी वे गुरुम्या र

लिंग भादश और भुज्ज भाचार हों के योग्य है। सीता ममता स्त्रीत्व के गुणों के प्रकटीकरण का देखकर उषस्विनी भीष्म के प्रत्येक व्यक्ति आश्चर्य और सम्मान में स्तब्ध बन गई थी।

पति के गमन पर उनका कुछ वस्त्र दूर रानी गीता अपने स्थान पर स्थिर खड़ी थी। गमन के दृष्टि ऊपर उठाई और सपन तथा गमन स्वर में गान— रावण का पूरी तरह से पराजित किया जा चुका है और मारा जा चुका है। इस तरह अयोध्या के सम्मान का पूरी तरह रक्षा हो गई है। अतः यह रानी जिग रावण ने उगरे पति से विलग कर लिया था पर निभर करता है कि यह यह चलाय कर कि उग विगन सरक्षण में और जिस व्यवस्था में रहना है। सीता का सीधे-सीधे सम्बोधित करते हुए और पत्र भर के लिए अपने ही योग्य भावा के बहाव में बहात हुए उन्होंने कहा— 'हे कामलागी आपकी दृष्टि सम्पूर्णतः पूरी की जाएगी। पर यह उचित धार समय नहीं होगा कि रावण के महल में रहने के कारण जिसका नाम वसुपति है चुका है, उम पुन उसका पुरान स्थान पर आसीन कर लिया जाए।'

इन शब्दों का सुनकर राजा अत्यन्त आश्चर्य और दुःख में डूबी घामन व्यक्ति के समान खड़ी की खड़ी रह गई। तत्पश्चात् उन्होंने स्वामी मान से अपना गिर ऊपर उठाया। यद्यपि उनका हाथ बांध रहे थे और आसू यह रहे थे, ता भी उनकी निष्कण भावाज गूज उठी 'मेरे चरित्र के बारे में, सचमुच धार धारणा फल सक्ता है। लगता है राम भी मरी उच्चता के बारे में सदेहशील है। तब तो मरे लिए एक विषय समस्या उत्पन्न हो गई है। मरे स्वामी ने यदि मुझे पहले बता दिया होता, जब मैं लया मैं बन्नी थी कि वह मेरे लिए नहीं बल्कि अयोध्या के सम्मान की धारिता मेरा उद्धार करेंगे तो मैंने उन्हें एक प्रयत्न करने से सचमुच, गान दिया होता। मरे लिए वही मर जाना कहा अधिक बेहतर होता पर मैं सोचती थी कि राम मेरे प्रति प्रेम से प्रेरित होकर इस दिशा में प्रयत्न कर रहे हैं। लक्ष्मण! जाओ और मेरे लिए चिन्ता तयार करो। मेरे विचार में जो विषय मुझ पर आ पड़ी है उसका एकमात्र हल यही है।'

सरक्षण और व्यवस्था के नियामक को सीता का यही उत्तर था। लक्ष्मण ने शोक और आश्चर्य से भाई की ओर देखा, लेकिन वहाँ से कोई सन्त न मिलने पर वह चिन्ता तयार करने लगे। मुख मुद्रा से ऐसा प्रतीत

हता था कि किसी गर्भार समस्या में है इसलिए किसी म साहस नहा था कि कुछ वह सबे । सीता अपने स्थान पर बैठे ही खड़ी थी, उनकी छाया म भ्रामू वह रहे थे और वह धय से प्रतीक्षा कर रही थीं ।

जब लकड़िया डनट्ठी हो गई और अग्नि प्रज्ज्वलित हो गई ता माता ने पति को, जा मिर मुकाए अपने स्थान पर खड़े थे, तीन बार परिश्रमा की । लोगो को स्पष्ट दिश्र रहा था कि उनका हृदय मधुरता स परिपूर्ण है । ऐसा लगता था माना अग्नि के समक्ष खड़ी होकर प्रार्थना कर रही हा । उन्होंने कहा "हे अग्नि देवता! तुम ससार के साक्षी हा, मेरी रक्षा करना । मैं सदैव राम क प्रति सच्च्ची रही हू । हे पवित्र अग्नि शिष्याओ! मुझे अपने में आत्मसात कर दो, हे पवित्रता क देवता! मुझे अपनी शरण में ले लो ।"

यह वह कर सीता ने तीन बार चिता की परिश्रमा की और ससार म विदा सेवर निभयना स चिता म प्रवेश कर गई । धधकती हुई अग्नि म प्रवेश करत हुए सीता ऐस लग रही थी मानो स्वर्ण वेदिका पर सोना रखा जा रहा हा । चारा तरफ खड़े लाग रान चिल्लान लगे । लेकिन यह क्या! जैसे ही सीता के चरणा ने चिता का स्पश किया, आकाश से राम क महिमा गान की मधुर ध्वनिया गूजन लगी । इन ध्वनिया से ऐसा प्रतीत हाता था मानो अलौकिक पुरुष का अपनी अलौकिक शक्ति स मिलन हो रना हो । उसी ममय अग्नि के बीच स स्वय अग्नि देवता सीता स मिरने के लिए आगे बडे । अपने दाए हाथ स सीता को थामे हुए उन्हें राम के सम्मुख ले गए । राम का मुखमण्डल प्रसन्नता स दमक उठा था । अग्नि देवता न राम को सीता सौपत हुए कहा— "हे राम ! सीता आप की ही है, आपके प्रति मन स वाणी म और कम स निष्ठावान और सच्च्ची है । मेरा अनुराध ह कि आप इहे स्वीकार करें । सीता आपकी ही है ।"

राम न माना का स्वीकार करत हुए कहा— "प्रिये ! सचमुच, मर मन म तुम्हारे बार म कोई सन्देह नहीं था पर सभी लागो की उपस्थिति म तुम्हें निर्दोष सिद्ध करना आवश्यक था, सचमुच तुम मेरी ही हो । यह कभी मन सोचा कि तुम मुझ से अलग हो सकती हो । तुम मेरी ही हो और मैं तुम्हारा परित्याग कभी नहीं कर सकता, जैसे कि मूय अपनी किरणो का अलग नहीं कर सकता ।"

उन्हें इस प्रकार श्रद्धा दखनर ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो अग्नि देवता द्वारा उनका पुनः विवाह हुआ हो। अभी उपस्थित लागा को भवानर एसा लगा था मानो स्वयं के द्वार खुल गए हो और स्वयं म बठे हुए दक्षरय सीता और राम का आशीर्वाद दे रहे हों और अयाध्या के राजा और रानी के रूप में उनका अभिनन्दन कर रहे हों।

यह सब था कि उनके वनवास के चौदह वर्ष समाप्त हो गए थे और जो दृश्य उन्होंने अभी देखा था उससे स्पष्ट था कि उनके पिता की आशा का तब तक शान्ति नहीं मिल सकती जब तक कि वे मिहागनारुड नहीं हो जाते। इसलिए राम अब अयाध्या पहुँचने के लिए तालाशित थे। एक-दो दिन सनिका में था और पुरस्वार बाटने के बाद वे सीता के साथ गुप्तक विमान द्वारा आवास्य मार्ग से शीघ्र ही अयाध्या पहुँच गए।

बहुते हैं उन दिनों रामराज्य में विधवाओं का कोई कष्ट नहीं था। जगसी जानवरों और रोगों से भी किसी को कोई भय नहीं था। बानुभा के डर से लोग पीड़ित नहीं थे। सभी लोग सुरक्षित थे। किसी प्रकार का कोई कष्ट नहीं था। वृद्ध लागा को बच्चा के अन्तिम संस्कार करने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। लोग प्रसन्न थे। वे एक दूसरे से ईर्ष्या नहीं करते थे। पड़-पड़ों हमेशा फल और फूलों से लदे रहते थे। इच्छा करने पर वर्षा हो जाती थी और मुखद हवाएँ बहती थी। राम के राज में सभी लोग सज्जन और सच्चर थे तथा उनके राज्य में सौभाग्य के सभी चिह्न थे।

यदि यह बहानी इस प्रकार समाप्त हो गई होती तो कितना सुख होना। महान कवि वाल्मीकि ऐसा ही चाहते थे। शायद सत्रह वर्षों तक लोग इस कथा को इसी रूप में जानते रहते। पर बाद में किसी समय किसी अज्ञात कवि द्वारा जो उत्तर कथा लिखी गई वह आश्चर्यजनक रूप से दुःखद है। यह उत्तर कथा बताती है कि सीता की अयाध्या-अग्नि परीक्षा लागा को सन्तुष्ट करने के लिए पर्याप्त नहीं थी। इसका कारण शायद यह भी था कि यह घटना बहुत दूर घटी थी। कानाफूसी और सन्देह जिसकी कल्पना राम ने पहले ही कर ली थी, अन्ततः चारों ओर फैल गया और जब [उन्होंने इस सम्बन्ध में सुना तो वह समझ गए कि नियति का विरोध व्यर्थ है सीता को और उन्हें अलग

सीता की अग्नि परीक्षा

रानी बन
होकर
संग
करती

होकर
किसी
किसी
के लिए
जान
मर्णा

कर
नहीं
।
के



अनग रहता ही होगा। प्रजापति व हिन व लिए राजा का हर प्रकार व बलिदान के लिए तैयार रहना चाहिए और उह महमूम हुआ कि यह नावहिन म भी नहीं है कि राजा व आचरण व सम्बन्ध म गत धारणा प्रचरिता रह। उनका सबल यद्यपि धीरचित्त था तथापि राम अपने में इतना विश्वास नहीं राजा पाए कि व गीता का स्वयं प्रतिम विनाई द मव। अन उत्तम लक्ष्मण के संरक्षण म गीता का जिनकी चिरनाल म तीव्र यात्रा की श्रद्धा था गंगा व दूरवर्ती तट पर स्थित वाल्मीकि व आश्रम म भज लिया। महा लक्ष्मण का राम का वियाग मन्थना था और उनमें विना लेनी थी।

इस भवमर पर सीता का एकाकीपन कितना दुःख था। यह सताप उहें सबमुच था कि व अपने पति व भाव का समझती ह और व भी उन्ह समझत ह। एक दूसरे व प्रति उन जो अन्तिम शब्द थ उनकी वजह म उनका अलगाव एवं पवित्र प्रतिज्ञा का पूरा करत व गमान था। ता भा व जाती थी कि उनका वियाग हमेशा व लिए है। व आत्मिक रूप रा हमेशा उनके साथ रहेंगी पर दोनों का हा यह आशा नहीं थी कि व एक दूसरे को श्रु पाएंगे।

जानी और पिता-सुतय वाल्मीकि व आश्रम म रहत हुए बीस साल बीत गए। सीता व जुवा बटे दयानु और प्यारे दादा व रूप म वाल्मीकि का सम्मान करत थे। बीस साल बीत जान व बाद वाल्मीकि व आश्रम म यह मन्माचार पहुँचा कि अयाध्या म यत्र समारोह होगा। तब तब वाल्मीकि, रामायण की रचना कर चुके थे और गम व वेटा—लव और कुश को रामायण की शिक्षा द चुके थे। उन्होंने निश्चय लिया कि व लटका ता अयाध्या के जाएंगे जहाँ व यज्ञ व भवमर पर रामायण गावर सुनाएंगे।

अभी रामायण का गायन समाप्त भा नहीं हुआ था कि राम का अनुभव होने लगा कि व लडके उही व पुत्र ह। रामायण व गायन म कई दिन ला गए थे पर राजा और उनका सलाहकार अत तब सुनत रह थ। तब सम्ब. सास नेने हुए राम महान वाल्मीकि की और मुँडे और उन्नि कहा— कितना श्रद्धा होता अगर सीता महा होता। लेकिन वह अपने स्त्रोत्र की दूसरी परीक्षा व लिए कभी सहमत नहीं हा सकती।

म उसस पूछूंगा। वाल्मीकि ने उत्तर लिया। व पति-पत्नी का मित्राना और उह देखना चाहते थ।

राम के आश्चय की सीमा नहीं रही जब यह सदेश पहुँचा कि सीता अगले दिन खुले आम अपने मतीत्व की परीक्षा देने के लिए महमत है—इन चार अग्नि परीक्षा द्वारा नहीं बल्कि शपथ लेकर।

सुबह हुई। राजा उमने सभी मंत्री और सबक राज मभा में बैठे थे। विशास भीड़ जमा थी जिसमें विभिन्न स्वरों के लोग थे जो देश के सभी भागों में सीता की परीक्षा देखने के लिए आए थे। वाल्मीकि का अनुसरण करती सीता मभा में दाखिल हुई। वह पूरी तरह पदों में थी, उनका निर झुका हुआ था हाथ जुड़े हुए थे, आँखों में आंसू थे और उनका साग ध्यान राम पर एकाग्र था। सभी दशका में प्रथमा और क्षुशी की चर दौड़ गई। उनमें से कोई भी यह कल्पना नहीं कर सकता था कि निकट भविष्य में क्या होगा।

वाल्मीकि ने जैसे ही रानी का राम के ओर सभा के सामने प्रस्तुत किया और राम ने सीता की ओर मुड़कर सभा के सम्मुख निष्ठा और मनीष की शपथ लेने के लिए कहा, तभी सभी लोगों ने देखा कि ध्यान और मुगधित समीर बहने लगी है जो कि देवताओं की निकटता का प्रतीक है। उपस्थित दशका में से कोई भी इस बात के लिए तैयार नहीं था कि राम के शपथ का प्रभाव इस प्रकार होगा।

स्वाभिमानी, पर विनम्र आत्मा के बल पर सीता ने सब कुछ ध्याया भाष्य और ममपण का आदेश वनी रह कर, उमने बिना किसी शिकायत के एकाकीपन के बीस वर्ष भले थे। लेकिन अब सब कुछ हो चुका था। 'ह दिव्य मा।' उमने चिल्ला कर कहा, "अरे देवों देवों हैं। जगत् यह सब है कि मने राम के सिद्धांतों का पुरुष का ध्यान नहीं किया तो मुझे परिश्रम के नाश में ले लो। अगर मने मन से, बचन में बचन से यगत् में मगन कामना की है तो हे मा, मुझे अपनी शरण में ले लो।" चाँच गुंजी तभी एक आश्चयजनक घटना हुई। मे फट गई जिससे से जवाहरात में जडा हुआ स्वामी नाम ने अपने निर पर उठाया हुआ था, पर पृथ्वी मा विराजमान थी जा अपने उसकी ओर हाथ फलाए हुए थी। पृथ्वी धरती में समाप्त लगी। यह दृश्य देखकर देवता

आकाश महल में मंगल ध्वनियाँ गुनाई देने लगी 'गीता धय है साता धय है ।', जस ही सीता, और पृथ्वी मा लागी की दृष्टि से आगत हृदय अभी कहत ह समस्त ब्रह्माण्ड में एक पल के लिए पवित्र सनाटा छा गया ।

एक हृदय ऐसा था जिनके लिए यह शान्ति महल नहीं थी । यह हृदय राम का था जो दुःख से टूट गया था । जैसे सीता उनके प्रति राखी था जैसे ही वे भी सीता के धरती में समा जान के बाद शून्य रहे । तब भी उत्सवों के लिए जिनके पलकों की उपस्थिति आवश्यक था उन्होंने अपनी पत्न का स्वर्ण प्रतिमा स्थापित कर ली थी और उमा का उपस्थिति में वे सभी राजकीय कार्यों का संचालन करते थे । इस प्रकार समय बीतता गया और वह अन्तिम क्षण भी आ गया जिस टाँका नहीं जा सकता था । तब राम और उनके भाइयों ने समस्त से विदा ली और अयोध्या के बाहर नन्ही विनारे पहुँच कर वे अपने दिव्य शरीरों में प्रविष्ट हो गए ।

इस प्रकार युग बीत गए और उन दिनों की कथा स्मृति आज भी सत्सार में विद्यमान है ।

—सिस्टर निवेदिता

निष्ठा, भक्ति और समर्पण

एक दूध बेचने वाली नदी के दूसरी तरफ रहने वाले एक ब्राह्मण को दूध पहुंचाया करती थी। नौका के चलने का कोई नियत समय न होने के कारण उसे प्रायः दूध पहुंचाने में देर हा जाती थी। एक बार जब वह देर स पहुंची तो ब्राह्मण ने उसे फटकारा। इस पर वह बेचारी स्त्री बोली "म क्या कर सकती हूँ? मैं अपने घर से तो सुबह ही चल पडती हूँ पर नदी के किनारे काफी समय तक मुझे नौका तथा अन्न यात्रियों की प्रतीक्षा करनी पडती है।" ब्राह्मण ने कहा, "ईश्वर का नाम लेकर तो लोग भवसागर के पार उतर जाते हैं तुम इस छोटी सी नदी को भी पार नहीं कर सकती?" वह सरल हृदया स्त्री तन्ने पार करने के इस आसान उपाय को जानकर बहुत प्रसन्न हुई। अगले दिन से ब्राह्मण को प्रातःकाल ही दूध मिलने लगा। एक दिन ब्राह्मण ने उस स्त्री से पूछा क्या कारण है कि आजकल तुम्हें यहा पहुंचने में कभी देर नहीं होती?" उसने कहा "आपके कहने के अनुसार मैं ईश्वर का नाम लेती हुई नदी पार कर लेती हूँ और अब मुझे नाविक के इन्तजार में खडा नहीं रहना पडना।" ब्राह्मण को इस बात पर विश्वास नहीं हुआ और उसने कहा 'क्या तुम मुझे दिखा सकती हो कि तुम नदी कैसे पार करती हो?' वह स्त्री उसे अपने साथ नदी के तट पर ले आई और पानी पर चलने लगी। स्त्री ने जब पीछे मुडकर देखा तो उसने ब्राह्मण को बहुत परेशान पाया। उसने कहा 'महाराज! यह क्या बात है कि आप मुझ से ईश्वर का नाम ले रहे हैं और हाथा से अपने कपडा को भीगने से बचा रहे हैं, क्या आपको ईश्वर पर पूरा भरोसा नहीं है? ईश्वर के प्रति सम्पूर्ण समर्पण और अटूट आस्था ही सभी चमत्कारी कार्यों के मूल में स्थित है।'

—श्री रामकृष्ण

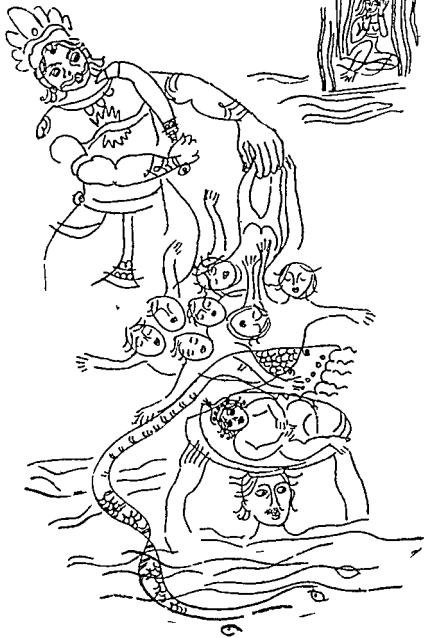


न वसुदेव और देवकी का वाराणस में जानन का आदेश दिया। परमात्मा परमात्मा का ध्यान में ही उन्हें आनंद मिलता था। इसलिए वे दाना अपने हृदय की गहराइयों में निष्ठापूर्वक उस ईश्वर में यह प्रायश्चित्त करते थे कि वह उनके बच्चे की रक्षा करे। इस प्रकार बच्चे में से प्रायश्चित्त में तीन वे सनातन्य हैं। अचानकस्था का अघकार में उन्हें ऐसा अनुभव हुआ मानो एक प्रवाण पत्र बौध गया हो। उस प्रवाण पत्र में दुष्ट का धन का न बाल्य निराहित हो गए और साथ ही विगत भृष्ट यशों की घनीभूत पीला भी समाप्त हो गई। आनंद स्वरूप परमात्मा ने उन्हें दशन दिए और अपनी मौम्य मुस्कराहट से उन्हें प्रगल्भ करते हुए मधुर शब्दों में उनसे कहा— अपना आर्यो याना और अपने पुत्र के रूप में जन्म लेने हुए मुझे दक्षा। पिता! गावुन में रहने वाले अपने परम मित्र राजा नद के पास मुझे ले चलो। उनकी पत्नी, रानी यशोदा ने अभी-अभी पुत्री का जन्म दिया है। उस पुत्री के स्थान पर मुझे रख कर पुत्री को बाल काठरी में ले आओ। मुझे यशोदा की गोठ में रख आना जो उस समय साईं हुआ होगी। आप निस्संकोच इस कथ को सम्मत्त करो।

उस प्रकार भगवान् श्री कृष्ण का प्रादुर्भाव राजा नद की बाल काठरी में हुआ जिन्होंने आगे चल कर मानवता को अत्याचार की बेज्जिया में मुक्त किया।

देवकी ने अपने पुत्र के सुंदर मुख का चूमा। वह भूत गई कि पुत्र का बाल घतरा है। तबिन वसुदेव का दिव्य दशन के समय की मभी बातें याद थी। उनसे बच्चे का छाती से लगाया और जैसे ही वह जेल छोड़ने के लिए तयार हुए उनकी बेज्जिया टूट गई और जल के दरवाजे खुल गए। उन्होंने बाढ़ से उफनती यमुना नदी पार की और बिना किसी घतरे के यशोदा की नवजात कन्या से अपने पुत्र का बल लाए। लौटते ही उन्होंने देवकी की गोठ में कन्या का लिटा दिया तभी जेल के दरवाजे बंद हो गए और उन्हें हयवडिया गग गई।

नद ने प्रातः काल जब कन्या का जन्म के बारे में सुना तो वह तत्काल उसे दखन के लिए काठ-कोठरी में आया। वसुदेव ने उससे प्रायश्चित्त की कि वह बच्चा का छात्र देखा कि कन्या से किसी प्रकार का घतरा नहीं हो सकता। पर नद ने उनको प्रायश्चित्त पर तबिन भी ध्यान नहीं दिया। बच्ची को पैरो से पकड़े हुए वह उस एक पत्थर पर मारने ही वाला था कि तभी एक अद्भुत घटना घटी। बच्ची उसके क्रूर और दानवी शिकजे में छूटकर ऊपर



आवाज में सुन्दर दवी मा के रूप में प्रकट हो गई और कम की भलना करते हुए उगने कहा— दुष्ट, क्या तुम समझते हो कि तुम सवगवित्तान की दृष्टि का टान सपन हो। तुम्हारा नाश करने वाला तो मोहूल में पल रहा है। यह वह वर यह अन्तर्धान हो गयी और राजा कम वापने गया।

अपने प्रिय राजा नष्ट व पर पुत्र-जन्म का शुभ समाचार सुनकर सारे गाण्डुन में खुशिया मनाई जाने लगी और शानी मा मशाल जा इस प्रदुभुत सीला ने धनभिज्ञ थी अपन पुत्र व सुन्दर मुग्य को प्रगप्रतापूर्वक निहारने लगी।

वामनावतार की कथा

2-116/8

असुरा का राजा बलि अपराजेय था क्योंकि उस पर ईश्वर का कृपा थी। उसने देवताओं के राजा इन्द्र को गद्दी से हटा कर उसके राज्य पर अधिकार कर लिया था और तीनों लोकों का अधिपति बन बैठा था।

इन्द्र की माँ अदिति अपने पुत्रों की पराजय पर शोक संतप्त थी। जब उसका पति कश्यप लम्बी अनुपस्थिति के बाद घर लौटा तो अपनी पत्नी का दुखी देख कर उसे भी दुख हुआ। उसने अपनी पत्नी को सात्वता लेते हुए कहा, माया की शक्ति बड़ी अगम्य है। सभी लोग मिथ्या मोह-त्राल में भ्रमित पड़े हैं। एक सबव्यापक सत्ता—जानन्दमय आत्मा सबको व्याप्य है। सभी मनुष्यों की अन्तःचेतना में प्रेम के जिस देवता वामुदेव का निवास है, उसी की आराधना करो। उसकी कृपा से तुम माया मोह से मुक्त हो जाओगे।

अदिति ने कहा, "ता मुझे बताओ मैं कैसे ब्रह्माण्ड के स्वामी सभी गुरुओं में महान गुरु की आराधना करूँ जिससे कि मेरे हृदय की लालसा पूरी हो सके। मैं स्वामी को कैसे प्रसन्न करूँ जिससे कि मुझे मनावाञ्छित वरदान प्राप्त हो सके।"

'अदिति, मैं तुम्हें अवश्य बताऊंगा कि सेवा और आराधना से ईश्वर को कैसे प्रसन्न किया जा सकता है।

ईश्वर की आराधना सम्पूर्ण आत्मिक निष्ठा और मानसिक एकाग्रता से की जाती है। उसकी जीवन्त उपस्थिति को अनुभव करा और इन पवित्र प्रार्थनाओं के माध्यम से उसके प्रति नमन करा

भगवान् वामुदेव ! आप परम पुरुष हैं
माक्ष्य रूप और शरणागत वत्सल
आप ही सभी हृदयों में प्रकाशित हैं
आपको नमस् है !

आप अव्यक्त हैं और बलिदान के

प्रना के दाता ह
 आपकी आत्मा है धरा का पान
 आपको नमः है !
 आप दयानु पिता ह
 आप ममतामयी मा ह
 गभी प्राणिया के स्वामी
 आप शक्ति हैं और आप ही पान है
 आपका नमन है !
 आप जीवन हैं
 आप प्रना ह
 आप गमस्त वातावरण की घुरी और आत्मा हैं
 आप उनके द्वारा प्राप्य हैं जो आपके योग ध्यान म
 स्थित ह
 भक्तिपूर्वक
 आपको नमन है !
 आप ब्रह्म ह प्रेमस्वरूप ह
 सावजनीन है आपका रूप
 मनातन समृद्धि आपकी लय है
 आपको नमः है !
 आप परम शरण हैं
 आप सर्वोच्च वरदान दाता ह
 आप पूजनीय भगवान हैं
 आपके चरण कमला की आराधना करते ह ज्ञानी
 चरम-तत्व की प्राप्ति के लिए

इस प्रकार भगवान की महिमा का गान करते हुए अपने मन का उन्नी
 म एकाग्र करो साधुओं की संगति करो और उन्हें सेवा द्वारा प्रसन्न
 करो। सभी प्राणियों की दबी प्रकाश का साकार रूप मान कर उनकी
 सेवा करो।

ऋषि ब्रह्मप द्वारा इस प्रकार शिक्षा पाकर अन्तिम पूरा निष्ठा और सच्चार्द्र
 से भगवान की आराधना करने लगी। और उसी पर ध्यान केन्द्रित कर दिया।
 उसने अपने सभी मनोवेगा पर काबू पा लिया। उसका मन शांत हो गया और

उसने अपने हृदय में सर्वात्मा और सबव्यापक वासुदेव की उपस्थिति का साक्षात्कार किया। उसका आनन्द अखण्ड था। वह उम उपस्थिति में पूरी तरह तमय हो गई। उसका मन प्रेम से द्रवित हो गया और उसने प्रार्थना की

आप पवित्र हैं

पवित्रता ही आपका नाम है

आप निधन और दीन के मित्र हैं

आपके चरण-नमलों की शरण में जा भी जाता है वही

आपकी पवित्र उपस्थिति में पवित्र हो जाता है

आप सर्वोच्च हैं

आपकी शान्ति सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त है

आप अपनी माया के सान्निध्य से

सृष्टि की रचना, पालन और सहार करते हैं

आप अपनी मूल गरिमा में शुद्ध और परम रूप में स्थित हैं

आपको नमन है।

आपका अस्तित्व है अनन्त आनन्दपूर्ण—

आप प्रसन्न हो जाएं तो

अपने भक्ता को अपनी महिमा शक्ति और शालीनता में

दिभूषित कर देते हैं।

अदिति ने अपने भीतर गहरे मौन का अनुभव किया और हृदय के दग मीन में उसने ये शब्द सुने

‘देवताओं की माता! मैं जानता हूँ कि आप क्या चाहती हैं। आप

असुरों के राजा बलि पर अपने पुत्रों को विजयी रखना चाहती हैं। यकिन बलि मरे सरम्भण में है। मैं आपसे भी प्रसन्न हूँ। आपकी इच्छा पूरी होगी— जिस दग से यह मैं अभी नहीं बताऊंगा। लेकिन यह मैं कुछ नहीं बता सकता हूँ कि मेरी शक्ति पुत्र रूप में तुम्हारी बाध में जन्म लगी।

कालान्तर में वचन पूरा हुआ और वासुदेव के पुत्र न जन्म लिया जिस पर देवी पुष्प हान के मार्गिक विद्रोह भीतर थे। यह पुत्र नाटा था। वह नाटे ब्राह्मण के रूप में प्रकट हुआ।

बलि ने जो अब तक माना था कि वह अपने पुत्रों को मारने के लिए प्रकट हुआ, जिसमें सभी ब्राह्मणों का शान्तिपूर्ण विद्रोह था। यह विद्रोह में भाग लेने के लिए नाग ब्राह्मणों के साथ था। यह नाग ब्राह्मणों के

जहाँ यज्ञ की तयारियाँ हो रही थीं ताँ उसे देख कर सभी बुद्धिमान ब्राह्मण और स्वयं राजा बलि आश्चर्यचकित रह गए। उमर शरीर स धनोक्ति प्रवाण प्रसफुटित हो रहा था। सभी उपस्थितगण परम श्रद्धा से मुड़े हो गए और राजा बलि ने उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। तब उस नाटे ब्राह्मण का मनोघित करते हुए राजा बलि ने कहा

ब्राह्मण! आप का मरग प्रणाम है। आप सभी देवी शक्तियों का प्रतीक हैं। आपकी पवित्र उपस्थिति से मैं ही नहीं मेरे पूजक भी वृताथ हो गए। आपकी अनुकम्पा से तीना ताक वृताथ हो गए। कृपया अपनी इच्छा बतनाइए ताकि मैं आपको प्रसन्न कर सकूँ और आपकी सेवा कर सकूँ।

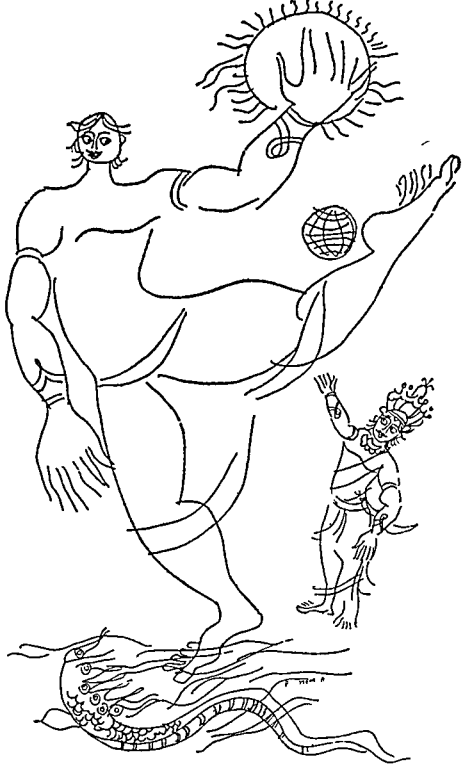
इस पर ब्राह्मण ने उत्तर दिया मैं आपकी श्रद्धा से बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। यह आपके मकया योग्य है। आप महानतम भक्त प्रह्लाद का पीत्र हैं जिन्होंने इस विश्व का वृताथ किया है। आपने वादा किया है कि मैं चाहुँगा, वह आप उपहार स्वरूप दगे। मुझे केवल तीन पग धरला दान म दीजिए।

राजा बलि इस छोटी सी माग पर हमा आह! केवल तीन पग पधवी हो क्या माग रहे ह? उसने कहा मैं आपको एक बडा द्वीप या एक बडा क्षेत्र द सकता हूँ जहा आपकी सभी आवश्यकताएँ पूरी होगी और आप आराम से रह सकेंगे। मेरी प्राथना है कि आप कुछ और दान में मागिए।

वीना भी मुन्नराया और उसने उत्तर दिया मैं तीन पग पधवी से ही सतुष्ट हो जाऊँगा। मुझे अधिक नहा चाहिए।

राजा बलि ने उम नाटे ब्राह्मण की इस तृच्छ माग पर मुस्कराने हुए कहा जसी आपका इच्छा। आप प्रसन्नतापूर्वक दान स्वीकार कर।

इसी समय राजा बलि के पुराहित शुक्राचार्य ने बलि का टोकते हुए कहा इस प्रकार दान का वचन देकर आप अपने आपको बहुत बडी मुसीबत में डाल रहे ह। क्या आप जात नहीं कि कश्यप आर अदिति का यह नाटा पुत्र अलौकिक शक्ति का प्रतीक है? यह अपने आनार मे पूरे ब्रह्माण्ड का नाथ सेगा और आप सब कुछ गवा बैठेंगे। आपने सब कुछ उम द लिया है और शय कुछ भी नहा बचा है। वह तीना



सारा का राज्य देवताओं का राजा इन्द्र को सौंप देगा। यह अपने एक पग से पृथ्वी का दूसरे से आवाश को और शेष ब्रह्माण्ड को नाप लेगा। उसका तीसरा पग के लिए कुछ भा नहीं बचेगा। यह आपकी सामर्थ्य में नहीं है कि अपना वचन निभा सके।'

राजा बलि को अपने बान की गम्भीरता का अब अनुभव हुआ। उसका ब्रह्माण्ड को लिए गए दान के वचन पर मुझे धेरे नहीं है। मैं इसे निभाऊंगा। क्या मैं प्रह्लाद का वंशज नहीं हूँ ?'

अब बलि ब्रह्माण्ड की ओर उन्मुख हुआ और अत्यन्त श्रद्धापूर्वक बोला 'कृपया आप दान स्वीकार कीजिए।' ब्रह्माण्ड की ओर देखकर बलि का ऐसा लगा मानो समस्त ब्रह्माण्ड उसमें स्थित हो। सब जसे ही ब्रह्माण्ड देवता ने पहला पग उठाया तो समस्त पृथ्वी उसमें समा गई उसके शरीर ने आवाश घेर लिया और उसकी भुजाओं ने चारों दिशाएँ। अपने दूसरे पग से उसने अंतरिक्ष और शेष ब्रह्माण्ड नाप लिया। उसके अगले पग के लिए वही बाईं जगह शेष नहीं थी। इस पर ब्रह्माण्ड देवता न मुस्कराते हुए बलि की आर दया और पूछा 'मैं अपना तीसरा पग कहा रखूँ ?'

राजा बलि ने विनम्रता से और श्रद्धापूर्वक कहा 'मुझे अपना वचन अवश्य निभाना है। समस्त ब्रह्माण्ड में, सचमुच वही भी जगह नहीं बची है जहाँ आप अगला पग रख सकें। लेकिन मेरा तिर अभी शेष है। अपना भगला पग मेरे तिर पर रखिए ताकि मैं भी सत्य के लिए आपका हो जाऊँ।

हे प्रभु! आपके चरणों में समस्त ब्रह्माण्ड को शरण मिलती है। मैं असामर्थ्य से वृत्ताप हुआ हूँ। मैं कितने लम्बे समय से शक्ति और धन के अहंकार में अंधा पड़ा हुआ था। मुझे अपनी दया और अनुकम्पा से मंडित करें। जो कुछ मेरा है उसे स्वीकार करें और बदले में आपका स्वरूप मेरे हृदय में निवास करें।

ब्रह्माण्ड के रूप में जगत् स्वामी ने कहा 'मेरा भक्त जहाँ भी है महिमा मंडित है। तुम मेरे भक्त हो और सच्चे हो। अपने इस दान के लिए जो तुमने मुझे दिया है तीनों लोकों में हमेशा तुम्हारा नाम रहेगा

ईश्वर सदा सहाय है

भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है —

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सयस्ज मत्परा ।
 अनन्येनैव योगेन मा ध्यायन्त उपासते ॥ 6 ॥
 तेषामहं समुद्धर्ता मृत्यु ससार सागरात् ।
 ममामि न चिरात्पाय मय्यावेशित चेतसाम् ॥ 7 ॥

(द्वादश अध्याय)

हे अर्जुन ! जो समस्त कर्मों को मुझ परमेश्वर को अर्पण कर मेरा ध्यान करते ह, और अनन्य भक्ति योग से मेरी उपासना करते हैं । (6) हे पाथ ! मेरे मे मन लगाकर उपासना करने वाले उन भक्ता का मैं शीघ्र ही मृत्यु रूपी ससारसागर से अच्छी तरह उद्धार करने वाला हू । (7)

हम एकाग्र हो अनन्त मौन और अंधेरे में ईश्वरीय शब्दा को पानी की तरह बूद बूद टपकते हुए देखते रहते ह ।

गीता में वह सभी कुछ है जिससे अशांत चित्त को शांति प्राप्त हो सकती है । दैनंदिन की जीविका के विषय में गीता में एक उक्ति है—
 अनव्यारिचिन्तयतो मा ये जना पर्युपासते ।

तेषा नित्याभियुक्तानां योगक्षेम वहाम्हाहम् ॥

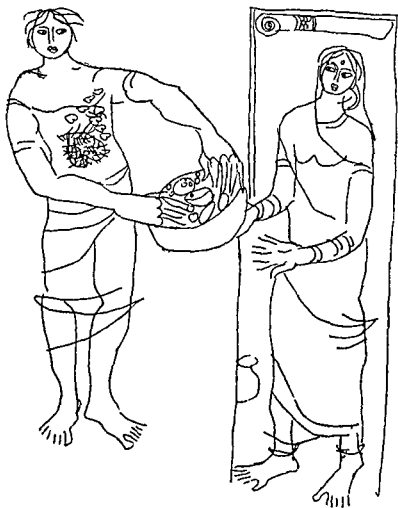
हे अर्जुन ! जो अनन्य भाव से भजन चिन्तन करते हुए मेरा सेवन करते ह, उन सबका मेरे मे निष्ठा करने वाला का योग क्षेम, अर्थात् उनकी आवश्यकता का मैं ही वहन करता हू ।

इस सम्बन्ध में गावां में एक सुन्दर कथा प्रचलित है । एक ब्राह्मण गीता की मूल-प्रतिलिपि तैयार कर रहा था । जब शब्द वहन लिखा गया तो उसके मन में सदेह उत्पन्न हुआ । उसने पत्नी से विचार विमर्श करते हुए कहा—“प्रिय ! क्या तुम नहीं सोचती कि वहन’ शब्द यहा

असम्मान सूचक है ? क्या भगवान का आशय यहाँ 'भोजना' शब्द से नहीं है।" पत्नी ने उत्तर दिया—'प्रियतम ! निस्सन्देह आप ठीक कहते हैं, 'भोजना' शब्द लिखना ही ठीक होगा।' कमरे पर ब्राह्मण ने चाकू से उस शब्द को जो उसने अभी अभी लिखा था मिटा दिया और उसकी जगह पर अपना नया सशोधित शब्द लिख दिया। एक क्षण बाद वह स्नान करन के निमित्त उठा। तभी उसकी पत्नी चिन्तातुर सी सामन आ खड़ी हुई। उसने कहा—'क्या मने आपसे कहा नहीं था कि घर में खाद्य-सामग्री नहीं है ? आपको क्या बना कर खिलाऊँगी ?' ब्राह्मण धीरे से मुस्कराया और उसने उत्तर दिया—'जाओ भगवान से प्रायश्चित्त करो कि वह अपना वचन निभाए। इस बीच मैं स्नान करने के लिए जाता हूँ। यह वह कर वह दूसरे कमरे में चला गया। अभी मुश्किल से कुछ मिनट ही बीते होंगे कि बाहर दरवाजे पर उसकी पत्नी की पुकार हुई। वहाँ खड़ा एक सुन्दर युवक उसे बुला रहा था। उसके हाथ में स्वादिष्ट भोजन की एक डलिया थी। स्त्री ने आश्चर्य से पूछा—'यह डलिया किसने भेजी है ?' तुम्हारे पति ने मुझे बुलाया था, इस डलिया को यहाँ लाने के लिए। युवक ने लापरवाही से कहते हुए डलिया उसके हाथ में धमा दी। युवक ने जैसे ही हाथ ऊपर उठाए तो गहिरी युवक के हृदय पर पड़ी खरोबा और धावा को देखकर स्तब्ध रह गई। वह चिल्ला उठी—'हाय ! मेरे प्यारे बच्चे ! तुम्हें किंगने घायल किया है ?'

युवक ने आहिस्ता से उत्तर दिया— तुम्हारे पति न बलाने से पहले मुझे एक छोटे तज चाकू से घायल किया था।

ब्राह्मण की पत्नी आश्चर्यचकित रह गई। खाद्य पदार्थों को भीतर रखकर वह जैसे ही लौगी युवक दरवाजे पर नहीं था। तभी उसका पति कमरे में प्रविष्ट हुआ। युवक के प्रति अत्यधिक सहानुभूति के कारण भोजन के प्रति ब्राह्मणों का आश्चर्य भाव दब गया था। उसने चिल्लाकर कहा— आपने सदेशवाहक को जल्दी क्या किया। ब्राह्मण भौचक्का सा उसके सामने खड़ा रहा। स्त्री ने समझाने हुए कहा— वही युवक जिसे आपने स्नान के निमित्त जाने से पूव भेजा था। ब्राह्मण ने हक्काते हुए कहा— स्नान के लिए। मैं अभी तो स्नान के लिए गया ही नहीं।" पति-पत्नी की आँख जैसे ही मिली वे दोनों समझ गए कि कौन उनके



घर आया था और बने उन्होंने भगवान के हृदय को घायल किया है। ब्राह्मण फिर धर्म-ग्रन्थ पर झुना और सशोधित शब्द यो मिटा कर मूल शब्द को वहाँ लिखा क्या कि अब सही पाठ के बारे में कोई सन्देह नहीं रह गया था। 'हे अनुज ! जो अनन्य भाव से भजन चिन्तन करते हुए मेरा सेवन करते हैं उन सर्वत्र मरे में निष्ठा करने वालों का योग, क्षेम अर्थात् उसकी आवश्यकता में ही बहन करता हूँ।'

प्राचीन भारत में ईश्वर के प्रति लोगो की ऐसी ही आस्था थी और आज भी सभी के दिलों में ऐसी ही आस्था है।

—वी० वी० वी० पत्रिका

कौन ऊचा, कौन नीचा

विख्यात भारतीय सम्राट अशोक के जीवन की एक घटना है। घटना उम समय की है जब सम्राट अशोक बौद्ध धर्मानुयायी बन चुके थे। सम्राट अशोक का एक मंत्री था जिसका नाम था यश। उसे यह बात अच्छी नहीं लगती थी कि सम्राट बौद्ध भिक्षुओं के सामने सिर झुकाए या उन्हें प्रणाम करे क्योंकि उसका विचार था कि बहुत से बौद्ध भिक्षु नीची जातियों के हैं।

एक दिन उसने सम्राट का ध्यान इस धार दिलाया और कहा कि उन जन्म व्यक्ति के लिए यह उचित नहीं कि वे प्रत्येक भिक्षु को उसकी योग्यता जाने बिना प्रणाम करें। सम्राट अशोक ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। उन्होंने सोचा यह सही अवसर नहीं है।

कुछ समय बाद सम्राट ने आदेश दिया कि उनका प्रत्येक मंत्री एक पशु का सिर सावजनिक स्थान में बेचकर आए। उन्होंने यश को बुलाया और उसे आदेश दिया कि वह बेचने के लिए पशु के सिर के स्थान पर मनुष्य का सिर लेकर जाए।

यह एक अजब आदेश था। किसी ने भी इसे पसन्द नहीं किया। लेकिन कोई कुछ नहीं कर सकता था। किसी में भी इस बात का विरोध करने की हिम्मत नहीं थी। इस आदेश का पालन तो हर हालत में करना ही था, मही तो सम्राट के दृष्ट हो जाने का भय था।

सभी पशुओं के सिर जल्दी ही बिक गए। केवल यश ही ग्राहक की तलाश में बाजार में खड़ा रहा। यश निरयत्न प्रतीक्षा करता रहा। उसने भुपन में भी सिर बेचना चाहा परन्तु तब भी उसे लन वाला बहा कोई नहीं था।

यश के अतिरिक्त सभी मंत्री अब तक सम्राट का सूचना देने के लिए दरबार में लौट आए थे। तभी उसे भी सूचना देने के लिए बुलाया गया। हुताग और निराग वह लौट आया। धीमे स्वर में उसने मनुष्य के सिर के न बिक पाने की अपनी व्याख्या कहा सुनाई।



“क्या कारण हा सकता है ?” सम्राट अशोक न पूछा ।

“वे बसकी ओर देखना भी नहीं चाहते थे ।” यश ने उत्तर दिया ।

“क्या उहे सदेह था कि यह सिर किसी गवार का है ?”

“नहा, यह नहीं । यह सिर किसी का भी हो सकता था ।”

‘मान लो यदि यह सिर मेरा होता तो क्या तुम्हें ग्राहक मिल जाता ?’ यश इतना भयभीत था कि उत्तर न दे सका । जब सम्राट अशोक ने विश्वास दिलाया कि उसे किसी प्रकार की हानि नहीं होगी तब यश ने उत्तर दिया—‘मेरे स्वामी तत्र भी नहीं । कोई भी मनुष्य के सिर को देखना नहीं चाहेगा, चाहे वह साधारण नागरिक का हो या सम्राट का—वह तब भी सिर है और एक घणाजनक सिर ।’

‘तुम कहते हो कि लाग गवार और सम्राट के सिर में अंतर नहीं करेगे । यह तुम्हारा अनुभव रहा है—यह कितना सच है । जब मेरा सिर भिक्षुओं के समक्ष झुकता है, जो उनके आध्यात्मिक ज्ञान और आत्मत्याग के जीवन के प्रति केवल सम्मान का सूचक है तब तुम्हें इतनी दुविधा क्या होती है । इसलिए किसी व्यक्ति को उसके पद के आधार पर मत जाचो—रत्न उस आधार पर जाचो कि उस व्यक्ति में क्या गुण हैं और ज्ञान है । किसी जजर और कुरूप शरीर में भी शुद्धतम हृदय का निवास हो सकता है ।’

‘निरं पत्थरा में भी मोती पड़े मिलत हैं । केवल चौकन्ने जौहरी की आँखें ही उन्हें पहचान सकती हैं और उनका मूल्य जान सकती हैं । अनान के पदों में धिरे मनुष्य की आँखें यह पहचान नहीं कर सकती । इसलिए अपने मन को केवल शरीर के भ्रम में नहीं पड़ने देना चाहिए ।’

सम्राट अशोक के काय था तब यश के सामने अब स्पष्ट हो गया था ।

अप्य मोह माया से मुक्त विचारक और महान पुरुष जिनके मन में ज्ञान का प्रकाश हो चुका था और जो भौतिक अहंकार से पूरी तरह मुक्ति प्राप्त कर चुके थे सुकरात के समान यह नहीं कह सकते थे—‘म ऐसेस निवासी था ग्रीक नहीं हूँ, मैं एक मनुष्य हूँ ।’ और ईसामसीह ने कहा था—‘यहूदी और गर-यहूदी सभ्य और बर यहू कुछ नहीं है ।’

नास्तिक

बहुत समय पहले की बात है कि दो मित्र थे—दोना हा युवा, हमउम्र और एक ही व्यवसाय में थे। यद्यपि वे एक दूसरे के प्रति निष्ठावान थे परन्तु फिर भी आपस में सत्ता झगड़ते रहते थे।

झगड़े का कारण यह था कि एक पक्का नास्तिक था और दूसरा पक्का नास्तिक। परिणामस्वरूप 'ईश्वर है या नहीं है' के बारे में उनमें तक भ्रमर उग्र रूप धारण कर लेते थे।

एक दिन एक भयानक धटना घट गई।

रोज की तरह वे जंगल में लकड़ियाँ काटने गए और वहाँ तक वितक में उलझ गए। नास्तिक ने कहा—'मैं तुम्हें बता रहा हूँ कि ईश्वर है।'

'बकवास', दूसरा व्यग्य से मुस्कराया।

'ईश्वर है क्योंकि हमने स्वयं अपना सजन नहीं किया, और शून्य में से तो शून्य की ही उत्पत्ति होती है।'

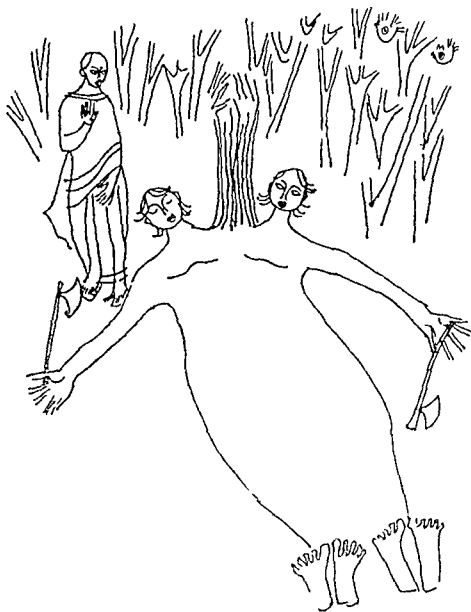
नास्तिक ने निरद्वेग भाव से कहा—'इन सब बातों का कोई आधार नहीं है। तुम्हारे जैसे मूख ही उन बातों को मान लेते हैं जो उन्हें बताई जाती है क्योंकि उनमें स्वयं सोचने की बुद्धि नहीं होती। अगर तुमने इस विषय पर उतना पढ़ा होता जितना मैंने ।'

सहसा एक मित्र आग बबूला हो गया।

'ईश्वर है वह चिल्लाया और उसने कुल्हाड़ी से उसके सिर पर वार किया जिससे कि वह तत्काल मर गया।

अपने किए पर भयभीत और पश्चात्ताप से भरे हुए, उसने अपने सिर पर भी वार किया और अपने मित्र के शरीर के पास ही लुढ़क कर मर गया।

अब वे दोनों अपने सूक्ष्म शरीरों में प्रविष्ट हो चुके थे। वे दुःखद भाव से अपने नश्वर शरीरों की ओर देखते रहे—उन शरीरों को जिन्हें वे छोड़ चुके थे।



लेकिन आगें जल्नी नहीं छूटती। जग ही उन्होंने महसूस किया कि वे मृत नहीं हैं वे फिर तब विनम्र बन लगे।

‘दखो, तुमने क्या कर लिया। तुम्हें कोई हक नहीं था कि कुल्हाड़ी से मुझ पर चार धरते। नास्तिक न शिवायत की।

‘मैं तुम्हें इस तथ्य से परिचित कराने का प्रयत्न कर रहा था कि ईश्वर है। दूसरे ने धीरज ग कहा।

‘वह सब ठीक है पर तुम धोनी समझगरी से काम से सक्त थे।’

तभी एक साधु वहाँ आ पहुँचे। दो युवा दहा का वहा पडा दख वे उनके प्रति सहानुभूति में रान लगे। वे सच्चे मन से प्रायना करने लगे कि दोनों युवका की देहा में, जो भरी जवानी में निममतापूर्वक मार गए हैं पुन प्राण संचार हो जाए। उनकी प्रायना में इतनी सच्चाई थी कि दो देवता पृथ्वी पर उतर आए।

दवताओं ने उन शरीरों की आर दखा और यह दखकर कि मूजन के वावजूद वे युवा और सजल हैं और लगभग नूतन के समान हैं, उन्होंने निश्चय किया कि क्या न वे स्वयं उनमें प्रविष्ट हो जाएँ और पृथ्वी का भ्रमण कर आएँ। यह देखकर कि उनकी प्रायना सुन ली गई है साधु बहुत प्रसन्न हुआ। उसका दयित-स्वत दोना में प्राणा का संचार हुआ, दोना छडे हुए एक दूसरे की जोर मुडे मुस्कराएँ और फिर हाथ में हाथ डाल कर प्रसन्नतापूर्वक अपने रास्त पर चल पडे। नास्तिक ने विजयी मुद्रा में कहा—‘मैंने तुम्हें कहा था कि ईश्वर है।’

‘ओह क्या व्यथ की शाकन लग गए हैं। तुम्हारे जैसे मूख लोग ही हर उस चीज में विश्वास जमा लेते हैं जो दखत है। अगर तुमने इस विषय पर उतना पढ़ा हाना जितना मैंने ।

रॉडिन उसका मित्र प्मके आगे और कुछ नहीं सुन पा रहा था। वह अपनी कुल्हाड़ी का ओर बढ रहा था।

महात्मा बुद्ध की शिक्षा

एक दिन जब महात्मा बुद्ध न वर्षा ऋतु में थावस्ति के समीप जैतवन में डेरा लगाया तो उन्होंने हमेशा की तरह सत्ताचार के नियमों का उपदेश दिया। बौद्धों एवं सामान्य जनता की उस सभा में एक गृहस्थ भी था जिसका नाम था—महापाल। वह असीम सम्पत्ति का स्वामी था। महात्मा बुद्ध के इस सदाचार के नियम जो 'जादि' में भी सुंदर, 'मध्य' में भी सुंदर और 'अन्त' में भी सुंदर हैं का सुनकर उसने मन ही मन सध में प्रविष्ट होने के बारे में सोचा। अपने सभी काय निपटा कर, अपनी धन-सम्पत्ति छोटे भाई का सौंप कर उसने पाच साल गुरु के पास अध्ययन करने में बिताए। तब महात्मा बुद्ध द्वारा महापाल का सध में दीक्षित किया गया और वरिष्ठ चक्षुपाल के रूप में उसका नामकरण किया गया। उसे अहत प्राप्ति सम्बन्धी ध्यान योग का मंत्र दिया गया।

दूर के एक मठ में एक छोटी सी कोठरी उसे दी गई जिसमें चलना फिरना या लेटना सम्भव नहीं था। केवल बड़े रहकर दिन रात ध्यान लगाया जा सकता था। ध्यान स्थित रहने के कारण शीघ्र ही उसकी आखा से पानी बहने लगा और उसकी आखों में लगातार दद रहने लगा जिसका इलाज शहर का डाक्टर न कर सका। धीरे धीरे उसकी दोनों आखा की ज्याति समाप्त हो गई। वह तब तक ध्यान समाधि में लीन रहा जब तक कि वह अह्न न बन गया। तब वह प्रत्येक वर्षा ऋतु में थावस्ति के समीप जैतवन में महात्मा बुद्ध के पास रहता।

एक दिन बौद्ध भिक्षुओं का एक दल भ्रमण करता हुआ बौद्ध मठ में आया। उन्होंने तथागत के उपदेशों को सुना, अस्सी महा भिक्षुओं का प्रणाम किया और दृष्टिहीन चक्षुपाल से मिलने की अनुमति चाही। रात्रि में वर्षा और तूफान के परिणामस्वरूप कीड़े मकोड़ा का झुंड बाहर निकल आया था। दृष्टिहीन भिक्षु तूफान के बाद यद्यपि सारी रात सो

नहा सवा था तो भी वह स्फूर्तिसम्पन्न था और अपनी काठरी के दरवाजे के सामन गोली धरती पर चहन-वन्मी कर रहा था । चूकि वह देण नही सकता था, उसन अनेक कीन् मकाडा को अपन पैरो तले कुचल कर मार दिया । जब भमणकारी भिक्षुआ ने यह देखा तो वे बहुत रुष्ट हुए । एक दूसरे को सम्वाधिन करत हुए उन्हाने कहा—

“दिखो वरिष्ठ चक्षुपाल ने यह क्या कर दिया । जब उसकी आखा में ज्याति थी तो वह सोया रहा और कोई पाप नही किया लेकिन अब चूकि उसकी ज्याति जाती रही है इसन कीडा-मकोडा को नष्ट कर दिया है । ‘जो धम है वह म करूंगा’ इमने कहा था, लेकिन जो अधम है वही इससे हो गया है ।”

इसलिए वे इसकी सूचना देन के लिए तयागत के पास पहुंच ।

क्या तुम लोग न वरिष्ठ चक्षुपाल को चलन के दौरान कीडे मकाडा को मारत हुए देखा ?

“नही भगवन् हमने ऐसा करत हुए नहा देखा ।

ठीक ऐसे ही जस तुम लागो न उस ऐसा करते हुए नही दखा ठीक वम ही उसने कीडे-मकोडा का नहा देखा । भिक्षुओ ! जो विकृतिया से मुक्त हा चुके ह वे किसी को नष्ट दन क बार म साच भी नही सकत ।

भगवन, यह जानते हुए भी अहत बनना उसकी नियति म है और आपने उसे चक्षुपाल नाम भी दिया । फिर वह क्या दष्टि छो बडा ?”

“भिक्षुआ ! यह पूव जन्म के उसके पापा का फल है ।”

क्या ? उसन ऐसा क्या किया था ?

‘भिक्षुआ ! तो मुना ।’

तब अतिथि भिक्षुओ को भगवान बुद्ध न अपने निकट एकत्र कर लिया, जिससे कि वे जान सकें कि अपन पूव जन्म के कर्मों क कारण वह चक्षुपाल कस अधा हो गया । अपन गरिमापूण पद से बुद्ध ने कहा शुरु किया

जात बहुत समय पहले की है जब काशी का राजा बनारस पर राज्य करता था । तभी एक चिकित्सक अपना कारोबार करत हुए गाव और शहरो म घूम रहा था । एक कमजार आखा वाली महिला को देखकर उस चिकित्सक ने पूछा, तुम्हें क्या बष्ट है ?



मेरी नन्न ज्यादा जाती रही है ।

“म तुम्हारा इलाज परगा ।

कृपा करके कुछ कीजिए ।

“आप इसके बदले मुझे क्या दगा ?

यदि आप मेरी आखा का ठीक कर देंगे तो म आपकी दासी बन जाऊँगी—मेरे पुत्र आर पुत्रिया भी ।

मिल्कुल ठीक वह बोला । उगने उस एन औपधि दी जिनके एक वार लगाते ही उसकी आखें पुन ठीक हो गई ।

इस पर उस स्त्री न साचा म इसकी दासी बनने का वचन दे चुकी हूँ —मेरे पुत्र एक पुत्रिया भी इसके दाम हाने । पर यह मेरे साथ अच्छा व्यवहार नहा करेगा । इसलिये म उस घाथा दूगी ।” जब चिकित्सक आया और उससे पूछा कि उमरा क्या हाल है ता उमन उत्तर दिया— पहले मेरी आखा म थोड़ी पीण थी पर जन ता और अधिक् कष्ट है ।”

चिकित्सक ने सोचा यह स्त्री मुन धोया दे रही है क्याकि यह मुझे कुछ भी दना नहीं चाहती । म उसस शुक नहा चाहता हूँ । अब म उस फिर म जधा बना दूगा । वह घर चला गया और सारी बात पत्नी को बतायी । उसकी पत्नी ने कुछ नहा कहा । तब उसने एन भरहम तयार की और उस स्त्री क घर जाकर उसस कहा कि आप इस मरहम को आखा पर मलो । उसने ऐसा हा किया और उसनी आखा की ज्यादा बूझ गई ऐस ही जैसे दीपक की लौ बुझ जाती है । जानते हो वह चिकित्सक कौन था ? यहाँ चक्षुपाल ही था ।

‘भिक्षुओ ! मेरे वत्स द्वारा किया हुआ कुकम अन भी उसका पीछा कर रहा है क्याकि कुकम कुकर्मों का पीछा वसे ही नहीं छोडत जैसे कि गाडी मे जुते हुए बलो का पहिए पीछा नहा छोडत । महात्मा बुद्ध ने इस कहाना का ताल मेल ऐसे बढाया जैसे काई राजा किसी दस्तावेज पर राजसी मोहर लगाए और फिर इस प्रकार घोपणा करे —

सभी वस्तुओ का मूल विचार है, विचार ही सबप्रथम है विचार से ही सभी वस्तुओ का निर्माण होता है ।’

यदि कोई व्यक्ति बुरा विचार मन म रखकर कुछ बोलता है या कोई काय करता है तो कष्ट उसका पीछा उसी प्रकार करते हूँ जैसे पहिए गाडी म जुते बला का ।

सब अपनी-अपनी जगह श्रेष्ठ है

एक राजा हर उस सयासी से जो उनके प्रदेश में आता था, पूछा करता कि दोना में से कौन श्रेष्ठ है—वह जा समार त्याग कर सयासी बन जाता है या वह जो गृहस्थ बन कर मसार में रहता है? जब उनमें से कोई यह दावा करता कि सयासी श्रेष्ठ है तो राजा उससे इस दावे को प्रमाणित करने के लिए कहता और जब वह इसे प्रमाणित न कर पाता तो राजा उसे विवाह करने और गृहस्थ बन कर मसार में रहने का उपदेश देता।

एक दिन एक युवा सयासी वहाँ पहुँचा। जब उससे भी यही पूछा गया कि दोना में से कौन श्रेष्ठ है तो उसने कहा—'हे राजा! प्रत्येक मनुष्य अपने स्थान पर श्रेष्ठ है।' जब राजा ने प्रमाण मांगा तो उसने कहा—'मैं इस प्रमाणित कर दूँगा अगर आप कुछ दिन मेरे साथ रहें।'

राजा सयासी के साथ ही लिया और एक दूसरे राज्य में आ गया। इस राज्य की राजधानी में एक बच्चा समारोह मनाया जा रहा था। एक बड़े उत्सव की तयारियाँ हो रही थीं ढोल और तगाड़े बज रहे थे, उदघोषकों की घोषणाएँ मूज रही थीं। उन्होंने सुना कि उदघोषक घोषणा कर रहे हैं कि राजा की बेटा—राजकुमारी एकत्र सम्भ्राम में से अभी अपना घर चुनगी। पहोसी देश के राजकुमार अपनी शानदार वेश भूषा में मुख्य भवन में एकत्र थे जहाँ राजकुमारी को घर चुनना था। कुछ राजकुमारों के साथ उनकी योग्यताओं एवं गुणों का गान करने के लिए भाट भी थे। राजकुमारी एक सुंदर पालकी में बठ कर सभी के सामने खड़ी होती हुईं गुजर रती थीं। उसके हाथ में चरमाला थी जिसे उसने घर के गल में डालनी थी।

राजकुमारी का कोई भाई-बहन नहीं था और उसके पति को ही उसके पिता की मृत्यु के बाद राज्य का शासक बनना था। सयासी और राजा भी उस सभा भवन में चले गए जहाँ स्वयंवर का समारोह सम्पन्न



होना था। राजकुमारी की पालकी एक के बाद एक सभी राजकुमारों के सामने रकी, परन्तु उसने किसी की ओर ध्यान न दिया। वहाँ उपस्थित युवा समाज के मध्य एक अग्र्य युवा सयासी भी था जो अपने ध्येयत्व के प्रभावडल के कारण सभी से बढ कर था। राजकुमारी की पालकी उसके समीप आकर रुकी तो राजकुमारी ने पालकी से बाहर आकर वरमाला उसे पहना दी। युवा सयासी ने उस वरमाला को एक तरफ फेंक दिया और कहा—“म प्रत्याशियों म से एक नहीं हू। मैं सयासी हू। विवाह का मेरे लिए क्या मय ?”

तब उस देश का राजा उस सयामी के पास आया और उसने कहा “बस, क्या तुम्हें मालूम है कि तुम अभी राजकुमारी को अपित आधे राज्य क स्वामी बनोगे और मरी मृत्यु के बाद पूर राज्य के ?” इतना कह कर उसन वरमाला पुन सयासी के गले मे डाल दी। युवा सयासी ने वरमाला को पुन फेंकते हुए कहा—“मै यहाँ विवाह के लिए नहीं आया हू। यह कहकर वह तेजी स सभा भवन स बाहर निकल गया। राजकुमारी युवा सयासी के प्रेम मे बावली हो गई थी, राजकुमारी ने उसका पीछा किया जिससे कि वह उसे वापस ला सके। दूसरा युवा सयासी जो राजा को वहाँ लेकर आया था, ने मुझाव दिया कि वे दोनों भी उनका पीछा कर। इसलिए वे दोनों भी सभा भवन छोड़ कर चल पडे। युवा सयासी कई मील चलता गया और एक जगल में पहुच गया - राजकुमारी अब भी उनका पीछा कर रही थी। सयासी घने जगल के टेढ़े मडे रास्तो म पहुच कर खो गया। राजकुमारी ने उसे खोजने का प्रयास किया परन्तु खोज म असफल हो जाने के बाद वह एक वक्ष के नीचे बठ कर रोने लगी।

वह सयासी और उसका साथी राजा भी वहाँ पहुचे और उन्होंने राजकुमारी को सात्वना देने का प्रयत्न किया। चूकि बहुत अधेरा हो चुका था और जगल स बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं मिल पा रहा था, उन्होंने मुझाव दिया कि वे रात भर वटवक्ष की छाया के नीचे विश्राम करेगे और अगले दिन सुबह जगल से बाहर ले जाने वाले रास्ते को खोज करेगे।

एक छोटे-से पक्षी ने उस वक्ष के शिखर पर अपना घोसला बनाया हुआ था। वह अपनी पत्नी और तीन बच्चा के साथ वहाँ रहता था।

वध के नीचे तान लाया था बड़ा खूबकर पत्नी ने पत्नी से कहा कि हम अपने अतिथियों के लिए कुछ करना चाहिए। नूँक सर्ग का मौम था इसलिए अतिथियों का आराम पट्टवान के लिए पत्नी ने आग का प्रबंध करने के वार में सावा और उड उडर वह सूखी घास के नन्ह निनक ला लाकर उनका सामन गिराने लगा। उडने उगवा उचिन उपयाग किया आर आग जला ली। पत्नी नेतव अपनी पत्नी से पुन कहा— 'प्रिय! इन लोगों के पास खाने के लिए कुछ नहीं है। हमारा यह कत्तव्य है कि वे अपने अतिथियों का खाने के लिए कुछ दें। यह कहते हुए वह आग में झूट पड़ा और मर गया। पत्नी की पत्नी ने सोचा कि उसका पति का शरीर अतिथियों के लिए पयान भोजन का प्रबंध नहीं कर पाएगा यह स्वयं भी आग में घा गिरी। बच्चा ने भी अपने माता पिता का अनुसरण किया और भी आग में गिर गए। वध के नीचे उठे तीनों व्यक्तियों का यह समयत देर न लगी कि पत्निया ने यथा अपना बलिदान दिया है। वे पत्निया के इस आतिथ्य को स्वीकार न कर सके और प्रातः काल राजा और सयासी ने राजकुमारी का जगन से बाहर निकलने का रास्ता बता दिया जिससे कि वह अपने पिता के पास पहुँच सके।

तब सयासी ने राजा से कहा— 'हे राजन! अब आपन दब लिया होगा कि प्रत्येक मनुष्य अपने स्थान पर श्रेष्ठ है। यदि आप समाप्त में रहना चाहते हैं तो उन पत्नियों की तरह रहें जिन्होंने दूसरों के लिए अपने प्राण छोड़कर दिए। यदि आप समाप्त त्याग करना चाहते हैं तो उस मुवा सयासी की तरह रहें जिन्होंने सर्वाधिक सुदरी राजकुमारी और राज्य भी तुच्छ था। प्रत्येक मनुष्य अपने स्थान पर श्रेष्ठ है लेकिन एक का कत्तव्य दूसरे का कत्तव्य नहीं हो सकता।'

देवयानी और कच

प्राचीन काल में देवताओं और असुरों में तीनों लोकों पर आधिपत्य के लिए भयंकर युद्ध हुआ था। दोनों ओर विख्यात नीति विशारद थे। देवताओं का नतत्व करने वाले थे बृहस्पति जो कि वेदों के ज्ञान में पारंगत थे जबकि असुरों को शुक्राचार्य के गहन ज्ञान पर भरोसा था। असुरों का बहुत बड़ा साम्रज्य था कि केवल शुक्राचार्य को ही सजीवनी रहस्य पता था जिससे कि वे मृत को भी जीवित कर सकते थे। जो असुर युद्ध क्षेत्र में मारे जाते शुक्राचार्य उन्हें बार-बार जीवित कर देते थे और इस तरह वे देवताओं के साथ निरन्तर युद्धरत रहते थे। इससे देवताओं को इस लम्बे युद्ध में अपने शत्रुओं के मुकाबले काफी हानि उठानी पड़ती थी।

वे बृहस्पति के पुत्र कच के पास पहुंचे और सहायता की प्रार्थना की। उन्होंने कच से विनय की कि वे शुक्राचार्य की कृपा अर्जित करके उनके शिष्य बन जाएं। एक बार समीपना और विश्वास पा लेने पर वे प्रत्येक उचित या अनुचित साधन द्वारा सजीवनी के रहस्य को प्राप्त कर जिससे कि वह बाधा दूर हो जिसके परिणामस्वरूप देवता कष्ट भोग रहे हों।

कच ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और वह शुक्राचार्य से मिलने के लिए असुरों के राजा वपपय की राजधानी जहां शुक्राचार्य रहते थे की ओर चल पड़ा। कच शुक्राचार्य के निवास स्थान पर गया और उचित अभिवादन के बाद उन्हें इस प्रकार सम्बोधित किया "मैं साधु अगीरस का पोता और बृहस्पति का पुत्र कच हूँ। मैं ब्रह्मचारी हूँ और आपकी छत्र छाया में जानाजन करना चाहता हूँ।

तब यह विषय था कि ज्ञान प्राप्ति के इच्छुक छात्रों को बुद्धिमान गुरु द्वार नहीं कर सकता था। इसलिए शुक्राचार्य ने उस अंगीकार कर लिया और कहा— कच, तुम अच्छे परिवार में हो। मैं तुम्हें मन से

अपना शिष्य स्वीकार करता हूँ। ऐसा करत हुए मैं बहस्पति के प्रति भी सम्मान प्रकट कर रहा हूँ।

शुश्राचाय के आश्रम में बच गई बच रहा। अपने गुरु के घर में रहने हुए उसने सभी काय मन और परिश्रम में किए। शुश्राचाय की एक गुंजर क्या थी—जिसका नाम था दम्पानी जिसे वह बहुत प्यार करता था। ब्रह्मचर्य का पूर्ण पालन करत हुए बच देवयानी को संगीत नृत्य एवं मनोरंजन के अथ साधना द्वारा प्रसन्न रखता। इस प्रकार वह उमका म्नेह पात्र बन गया था।

अमुरा को जब यह पता चला तो वे बहुत चिन्तित हुए। उन्हें सदह हुआ कि बच का उद्देश्य शुश्राचाय से सजीवनी में रहने को जानना है। वे इस सबको दूर करने का प्रयत्न करने लगे। एक दिन जब बच अपने गुरु के पशुमा को चरा रहा था तो अमुरा ने उसको पकड़ लिया। उसने टुकड़े-टुकड़े कर लिए और उमका मांस कुत्ता को खिला दिया। जब पशु बच के बिना लौट आए तो देवयानी को बहुत चिन्ता हुई। वह दौड़ी हुई अपने पिता के पास गई और उमने ऊंचे ऊंच चिल्ला कर कहा—“सूय अस्त हो चुका है और आपका सध्या का मन भी हो चुका है। अभी तक बच नहीं लौटा है। पशु अपने मांस लौट आए हैं। मुझे डर है कि बच के साथ कोई दुपटना न हो गई हो। मैं उसके बिना नहीं रह सकती।”

शुश्राचाय ने सजीवनी बला के प्रयोग से मरे हुए बच को प्रकट होने के लिए कहा। तत्काल बच जीवित हो उठा और मुस्कराते हुए अपने गुरु को प्रणाम किया। देवयानी ने जब देर में आने का कारण पूछा तो उसने बताया कि जब वह पशुमा को चरा रहा था तो अचानक अमुरा ने उस पर हमला कर लिया और उमने मार दिया। वह बचने जीवित हो गया—यह नहीं जानना। पर वह जीवित है इसमें भला क्या सन्देह हो सकता है।

एक अथ अवसर पर जब वह देवयानी के लिए फूल तान के लिए गया हुआ था तो अमुरा ने देवयानी के द्वारा उसे पकड़ कर मार दिया और उसकी अस्थिया को पीसकर समुद्र के जल में मिला दिया। जब बहुत देर तक बच नहीं लौटा तो देवयानी पहले की तरह अपने पिता के पास गई पिता ने इस बार भी सजीवनी द्वारा बच को जीवित प्रदान किया और जो घटित हुआ था उस सम्बन्ध में बच से सुना।

तीसरी बार असुरों ने फिर कच को मार दिया। अपने विचार से उन्होंने इस बार बड़ी होशियारी से काम किया। उसके शरीर का जलाया, अस्थिया को सुरा म मिलाकर शूत्राचार्य को पश किया जिम बे बिना किसी मदेह के पी गए। इस बार पशु फिर कच के बिना लौट आए तो देवयानी ने हम बार पुन पिता से कच के लिए प्रार्थना की।

शूत्राचार्य ने बेटी को मात्वना देनी चाही परंतु सभी प्रयत्न व्यर्थ रहे। उन्होंने कहा—“यद्यपि मने बार-बार कच को जीवन दान दिया है लेकिन असुर उने मारन पर तुले हुए है। मृत्यु अवश्यभावी है। अत तुम्हारे जमी ममलत्तार लडकी को दुखी होना शोभा नहीं देता। जीवन और सुन्दरता का आनन्द भोगने के लिए अभी तुम्हारी मारी जिदगी पडी है।

देवयानी कच को हृदय स प्रेम करती थी। सृष्टि के प्रारम्भिक काल से लेकर आज तक विरहाग्नि को नीति वाक्या स कभी शात नहीं किया जा सका। देवयानी ने कहा—‘अगीरस का पीना और बहुस्पति का पुत्र कच निर्दोष था। उसने हमारी सेवा, निष्ठा और लगन मे की थी। म उमे मन से प्रेम करती हू। अब जबकि वह मर गया है जीवन मेरे लिए अमह्य हो गया है। इसलिए म भी मर जाऊंगी।’ देवयानी ने खाना पीना बंद कर दिया। शूत्राचार्य का हृदय अपनी बेटी के दुख म विह्वल हो उठा। उहे असुरों पर बहुत राव आया। उहे अहसास हुआ कि ब्राह्मण की हत्या का भयंकर पाप उन सबके भविष्य को ले डूबेगा। उन्हनि सजीवनी कला के प्रयोग मे कच को प्रकट होने के लिए कहा। कच चूकि सुरा म मिश्रित होने के परिणामस्वरूप सजीवनी शक्ति से पुनर्जीवित ता हा गया परंतु राहर आने म अममथ रहा और प्रत्युत्तर भर दे सका।

शूत्राचार्य ने क्रोध और आश्चर्य म कहा— हे ब्रह्मचारी ! तुम मर शरीर मे कसे प्रविष्ट हा गए। क्या यह भी असुरों का काय है ? यह शक्य बहत बुरा है। मेरा मन करता है कि असुरों को तत्वान समाप्त करके देवताओं स मिल जाऊ। लेकिन म्चे पूरा वत्तात सुनाओ।’

कच ने उम असुविधाजनक स्थिति म पडे होने के बावजूद मारा वत्तात वह सुनाया।

उच्च आत्मा वाले और सधमी शूत्राचार्य, जिनकी महानता अद्वितीय

थी वम प्रवार छले जान क प्रति बहूत श्रुद्ध हुए और मानवता के हित म उहाने कहा

जो मनुष्य विवक रहित हाकर सुरापान करगा उसक सभी गुण समाप्त हा जाएगे वह सभी क लिए घणा का पात्र बन जाएगा । मानव मात्र के गति यह मरा सदश है जिस एक आवश्यक धार्मिक उक्ति के रूप म भावता दी जाती चाहिए ।

तब वे अपनी बेटी देवयानी की ओर मुड़े और बोले, 'प्रिय देटी ! एक समस्या पदा हा गई है । यदि कच का जिंदा रहना है ता उस मेरे पेट की फावर बाहर आना होगा और इका अथ हागा मेरी मृत्यु । मेरी मृत्यु से ही उस जीवन प्राप्त हो सकता है ।

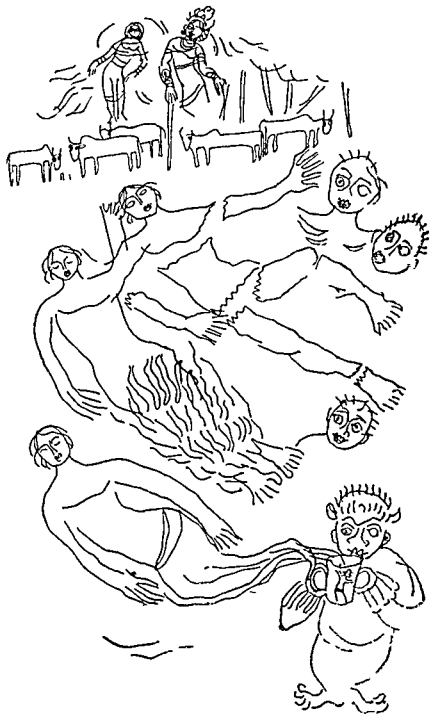
देवयानी रोने लगी और उसने कहा— हाय ! दाग ही तरह म मेरी मृत्यु है क्यानि तुम दोनों म म एक भी मरता है तो म कच नहीं पाऊगी ।'

अब सकट से उभरने का एक मात्र रास्ता शुक्राचार्य के सामने बंध गया ।

'हे बृहस्पति के पुत्र ! अत्र मरे सामन स्पष्ट है कि तुम किम उद्देश्य से यहां आए थे और सचमुच तुमने अपना उद्देश्य प्राप्त कर लिया है । म तुम्हें देवयानी के लिए अवश्य जीवन कर्गा । लेकिन इस प्रक्रिया म देवयानी को मेरी मृत्यु भी मजूर नहा । एकमात्र रास्ता यह है कि तुम्ह सजीवनी की कला म दीक्षित किया जाए जिससे कि जब तुम मरा पेट फाड कर बाहर आओ और उस प्रक्रिया म मैं मर जाऊ तो तुम मुझे पुनर्जीवित कर सको । जो पान मैं तुम्हें देने वाला हूँ, उसका प्रयोग तुम मुझे पुनर्जीवित करने म करना जिससे कि देवयानी को हम दोनों म से किसी का वियोग न सहना पडे ।

अपने कथनानुसार शुक्राचार्य न सजीवनी-कला कच को सिखा दी । तत्काल कच शुक्राचार्य के शरीर से ऐसे बाहर निकल आया जस कि बादला मे से पूण चंद्रमा बाहर निकल आए । महान गुरु शुक्राचार्य क्षत विक्षत होकर गिर पडे और मृत्यु को प्राप्त हुए ।

कच ने तत्काल शुक्राचार्य को सजीवनी के नए प्राप्त पान से जीवित कर दिया । कच न शुक्राचार्य को प्रणाम किया और कच— वह गुरु जो अज्ञानी को पान दता है पिता तुल्य है और चूकि म आपके शरीर से उत्पन्न हुआ हूँ इसलिए आप मेरी माता भी ह ।



उमने वाच कच कई वर्ष तक शुक्राचार्य की छत्रछाया में रहा। जब उसके बचन की अवधि समाप्त हो गई तो उमने देवताप्रा के लोक में जाने के लिए गुरु से आज्ञा ली।

देवशर्मा ने कहा "अमीरम के पौत्र ! तुमने अपने निर्णय जीवन में, अपनी महान उपलब्धियों से और अपने अभिजात्य गुणा में मेरे हृत्पत्र को जीत लिया है। मैं तुम्हें एक लम्बे धरसे मे हृदय से प्यार करती आई हूँ। उम समय से जबकि तुम निष्ठापूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन कर रहे थे। अब तुम मेरे प्रेम व प्रत्युत्तर में मुझ से विवाह करके मुझ प्रसन्नता प्रदान करो। बहस्पति के पुत्र तुम मुझे ग्रहण करने के सवया योग्य हो।

उन जिना वद्विमान और योग्य आह्वान कथाप्रा के लिए अपने मन की बात सम्मानपूर्वक और स्पष्टता से बतना तोई अनामाय बात नहीं थी। परंतु कच ने कहा—

'हे निर्णय कथा ! तुम मेरे गुरु की बेटी हो और सत्ता ही मेरे सम्मान के योग्य हो। मुझे तुम्हारे पिता के शरीर से उत्पन्न होकर ही जीवन दान मिला है इस प्रकार मैं तुम्हारा भाई हूँ। इसलिए वहन तुम्हारे लिए यह उचित नहीं कि तुम मुझे विवाह के लिए कहो।

देवयानी उसे समझाने का व्यथ प्रयत्न करती रही, "तुम बहस्पति के पुत्र हो, मेरे पिता के नहीं। अगर मैं तुम्हारे पुनर्जीवित होने का कारण रही हूँ तो यह इमीलिए कि मैं तुम्हें प्यार करती थी सचमुच मैं तुम्हें सत्ता प्यार करती रही हूँ। तुम्हारे लिए यह उचित नहीं कि तुम मेरे जसी निर्णय और निष्ठावान कथा को त्याग दो।'

कच ने उत्तर दिया— मुझे अग्रम के रास्ते पर मत भटकानो। नि सन्नेह तुम आकर्षक हो। लेकिन मैं तुम्हारा भाई हूँ। मुझे विनाई दो। मेरी अभिलाषा है कि मैं सदैव अपने गुरु शुक्राचार्य की पूरी तरह सेवा करता रहूँ।'

इन शब्दों के साथ कच ने देव लोक की ओर प्रस्थान किया। शुक्राचार्य ने अपनी बेटी को सात्वता दी।

—सी० राजगोपालाचार्य

ययाति

सम्राट ययाति पांडवों के पूजकों में से एक था। उसने कभी हार नहीं मानी थी। वह शास्त्रों के बताए माग पर चलता, अपने पूजकों एवं देवताओं का दिल से सम्मान करता। वह प्रजा के कल्याण में लगा रहता जिससे वह लोकप्रिय शासक बन गया।

पर शुक्राचार्य के शाप से वह असमय ही बूढ़ा हो गया था क्योंकि उसने शुक्राचार्य की पत्नी से दुर्व्यवहार किया था। महाभारत के रचयिता के शब्दों में— ययाति को वह वृद्धावस्था मिली जो मौल्य को समाप्त कर देती है और कष्टदायक होती है। यह कहना अनावश्यक है कि यौवन का अचानक वृद्धावस्था में रूपान्तरण कितना कष्टकारक होता है क्योंकि तब युवा स्मृतियों की भयकरता कहीं अधिक बढ़ जाती है।”

ययाति अचानक बूढ़ा हो गया था पर ऐन्द्रिय सुख भोग के लिए लालायित था। उसके पांच सुंदर पुत्र थे सभी योग्य एवं गुणी। ययाति ने उन्हें बुलाया और दयनीय भाव से उनके स्नेहपूर्ण व्यवहार के लिए प्रार्थना की और कहा, “आपके पितामह शुक्राचार्य के शाप ने असमय ही मुझे बूढ़ा कर दिया है। मेने जीवन का आनन्द नहीं लिया। यह जाने बिना कि भविष्य में क्या है मेने सयमी जीवन व्यतीत किया यहाँ तक कि मर्यादित सुख का भी नहीं भागा। अब तुम में से एक का मेरे बुढ़ाप का बोझ सहना होगा और बन्धु में अपना यौवन मुझे देना होगा जो इसके लिए तयार है वह मेरे राज्य का शासक होगा। मैं भरे-पूरे यौवन का आनन्द भोगना चाहता हूँ।”

उसने सबसे पहले अपने बड़े पुत्र से यौवन देने के लिए कहा। उसने उत्तर दिया—“हे महान राजा! अगर मैं आपका दुःखा ले लूँगा तो दुःखतिया एवं नीकर मुझ पर होंगे। मैं ऐसा नहीं कर सकता। मेरे छोटे भाईया से पूछ लें जो आपको मुझसे अधिक प्रिय हैं।

जब दूसरे पुत्र से पूछा गया तो उसने भी नम्रतापूर्वक इन शब्दों में

एकार कर लिया— पिताजी आप चाहते हैं मैं आपका बुढ़ापा ले लूँ जो न केवल शक्ति एवं सौभाग्य को नष्ट कर देता है—माय ही जमा कि मैं देख रहा हूँ—बुद्धिमत्ता भी। मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं है।

तीसरे पुत्र ने उत्तर दिया— एक बूढ़ा आदमी घाड़ या हाथी की सवारी नहीं कर सकता। उसकी आवाज़ भी उखड़ाती है। मैं ऐसी दयनीय दशा में क्या करूँगा? मुझे यह स्वीकार नहीं।”

राजा आश्रित हुआ, जब उसने दया कि उसकी इच्छा पूरी करने से उसके तीनों पुत्रों ने इंकार कर दिया है उस चौथे पुत्र से अच्छे व्यवहार की आशा थी। राजा ने उससे कहा—“तुम मरना बचना से लो। यदि तुम मुझे अपना जीवन दे दो तो मैं इसे कुछ समय के बाद तुम्हें लौटा दूँगा और बुढ़ापा ले लूँगा।

चौथे पुत्र ने माफी चाही क्योंकि यह ऐसी बात थी जिसके लिए वह किसी भी हालत में सहमत नहीं हो सकता था। वह आत्मी की तो अपना शरीर स्वच्छ रखने के लिए भी योग्यता की सहायता लेनी पड़ती है कितनी दयनीय स्थिति है। वह अपने पिता को भले ही बहुत प्यार करता था पर उसने ऐसा करने से इंकार कर दिया।

अपने चारों पुत्रों के इंकार करने पर ययाति को बहुत दुःख हुआ। वह कुछ समय मौन रहा फिर उसने अपने आखिरी पुत्र को बुलाया जिसने आज तक उसकी इच्छाओं का विरोध नहीं किया था—

तुम मुझे बचालो। मुझे शूरियो निबलता और श्रेष्ठ केशों वाला बुढ़ापा शुक्राचार्य के शपथ मिला है। यह मेरे लिए असह्य है। यदि तुम मेरी इन निबलताओं का स्वीकार कर लो तो कुछ समय के लिए मैं जीवन का और आनन्द भोग लूँ। फिर मैं तुम्हें तुम्हारा जीवन लौटा दूँगा और आपसे तथा उसके दुखों को ले लूँगा। मेरी प्रार्थना है, अपने बड़े भाइयों की तरह इंकार न करना। अनिष्ट पुत्र पिता के वात्सल्य से द्रवित हो गया और उसने कहा— पिता मैं अपना जीवन सह्य आपको प्रदान करता हूँ तथा बुढ़ावस्था के कष्टों और राज्य की चिन्ताओं से भी आपको मुक्त करता हूँ। आप खुश रहें। यह शत्रु मुनकर ययाति ने उम्मे गले लगा लिया।

जैसे ही उसने अपने पुत्र का स्पर्श किया ययाति मुक्त के रूप में रूपान्तरित हो गया। पुर जिम्मे पिता की बुढ़ावस्था को स्वीकार किया



या, राज्य पर शासन करता रहा और उम बहुत प्रसिद्धि प्राप्त हुई ।

ययाति न बहुत समय तक जीवन के आनन्द भोगे लेकिन वह सतुष्ट नहीं हुआ । वाट म वह कुंघेर के उद्यान म चला गया और वहा एक कुंवारी अप्सरा के साथ कई वष मिनाए । कई वषों तक विषय भोग स तृप्ति प्राप्त करने के यथ प्रयत्नो क उपरांत वह सच्चाई पहचान गया । पुर के पास लौट कर उसन कहा— प्रिय पुत्र योन इच्छा भोग से कभी तृप्ति प्राप्त नहीं हा सकती ।स ही जस कि आग म धी डालने से भाग नहीं बुझती । मने यह सुना और पटा था परंतु आज तक यह मरा अनुभूत नहीं बना था । कोई भी इच्छित वस्तु—अनाज, साना पशु और स्त्री मनुष्य कामनाआ का कभी तप्त नहीं कर सकती । रचिया अरचियो से परे मानसिक सामजस्य द्वारा ही हम शान्ति प्राप्त हा सकती है । यही ब्रह्मावस्था है । अपना यावन वापस ले लो और समझदारी स राज्य पर शासन करा ।”

इन शब्दो के साथ ययाति ने अपनी बढावस्था वापस ल ली । पुर द्वारा यौवन धारण कर लने पर वह ययाति द्वारा राजा बना दिया गया और ययानि स्वय वन मे चला गया । वहा उसन मधमपूण जीवन व्यतीत किया और बृष्ठ समय वाट उसे स्वर्ग प्राप्त हा गया ।

—सी० राजगोपालाचाय

चित्तकेतु की कथा

मनुष्य जन्म सचमच एक बरवान है क्योंकि यह जीव का आत्मचेतना क रूप म विकास है जिससे कि धार विकास की प्रेरणा मिलती है। केवत मनुष्य ही परम सत्य का जान सकता है और पूणता प्राप्त कर सकता है पर कम लोग ऐमे हागे जो यह जानने का प्रयत्न करे कि उनके लिए अच्छा क्या है ? कुछ लोग ही ऐम ह जिह मक्ति की आकाक्षा हो और ऐस ता और भी कम है जा सत्य जानना चाहते हा और मुक्ति पाना चाहत हा। ऐसी निर्विकल्प आत्माए मचमच विरल ह जिहोने ईश्वर के माप तात्मात्म्य स्थापित करके शिव की अनुभूति प्राप्त कर ली है।

एक प्राचीन कथा है जिसम इस सत्य का वाद्य कराया गया है।

एक समय की बात है कि सूरसेन नामक स्थान पर एक नाकद्रिय राजा था जिमका नाम था चित्तकेतु। केवल एक कामना क निद्रा राजा की शेष सभी कामनाए पूरी हो चुकी थी पर जो कामना पूरी न्य हई थी उसकी वजह से वह बहुत दुखी रहता था। उसकी इच्छा, सुन्दर पत्नी शक्तिस्फूर्ति, पूण यौवन तथा अनन्य मुग्ध स्त्री के उपलब्ध नहीं कर पाती थी। उस पुत्र की इच्छा थी।

एा दिन एक महर्षि अगीर राजा-दरबार में आये और कहा कि राजा हृदय से दुखी ह, उहाने राजा से कहा

'जिमन अपन मन पर विजय पा ली ह उहाने उहारा कामना प्राप्त कर ली है। ऐसा लगता है तुम्हारी भाई कथा कहते हैं कि है।

श्रद्धि के प्रति सम्मान प्रकट करत हुए राजा ने कहा :

'माय गुरुवर ! आप एक महान् दान हैं। मैंने आपसे उहारा समस्त दोष जला चुके ह। आप अन्तर्द्वारा मेरे कामनाओं के लक्ष्य को जानते हैं। मेरी मनोकामना की पूर्ति करने में आपकी सहायता

मझम झुनना चाहन ह मरनिए म वनाता हूँ—मर पास के सभी वस्तुए ह जा मनुष्य चाहता है पर बवल एक नटी है जिससे कि मरी प्रसन्नता सम्पूर्ण हो—मरा काई पुत्र नही है ।'

महर्षि अगीर को उग पर दया भ्रा गई और उहनि राजा और रानी का वरदान लिया । जात समय महर्षि न कहा— हे राजन ! तुम्हारे यहा पुत्र का जम हागा—पर वह तुम्हार लिए एक साथ दुध और प्रसन्नता का कारण बनेगा ।

कुछ समय बाद राजा चिन्नवतु क घर पुत्र का जम हुआ । उसकी पत्नी का कोई ठिकाना नही था । सभी बहुत प्रसन्न थे । परन्तु शत्रु नी उनकी प्रसन्नता दुध म बदल गई जब एक दिन दाई न बच्चे को मत पाया । राजा नी दैप्यांनु रखला न उमे विष द लिया था । राजा का दुःख असह्य था । इस वार फिर महर्षि अगीर नारण मुनि के साथ राजा क पास पहुँचे और उहान कहा— ह राजा ! तुम जिम्मे लिए दुखी हा रहे हो । नि तुमन अपना पूर बहतर पुकारा था वह मत नही है । आत्माए ता नती बी रेत क समान है जो समय के प्रवाह म बहती ह—एक दूमरी ग मिनती ह और फिर अलग हो जाती ह । केवन मनुष्य का शरीर जम लेता और मरता है । आत्मा ता अमर है ।'

राजा का दो महान ऋषिया का उपस्थिति से बहुत शान्ति प्राप्त हुई और उसने क्या पवित्रात्माभ्रा ! आप बोन है ? आप जस ऋषि धरती पर भ्रमण करन गए उन उन स्थाना पर जान और शान्ति का प्रकाश फलात ह जहा उहा अशान्ति और अज्ञान है । आप मझे भी वही प्रकाश द जिसम कि मरा अज्ञान दर ना ।

ऋषि अगीर न कहा— म वही हू जिमने तुम्ह पुत्र का वरदान दिया था । महर्षि नारण भी तुम्ह आशीर्वाद दन आए ह । हमन तुम्हारे प्रिय पुत्र के दहनत क वार म गुना था और हम पता था कि तुम दुध क कारण निराशा क अंग्रे से घिर गए हो । तुम प्रेम के देवता के अनय भक्त हा—तुम्ह उस तरह दुखी नही होना चाहिए ।

म जब पहली वार तुम्हार पास आया था उस समय म तुम्ह उच्चतम जान प्रदान कर सकता था लेकिन तब तुम्हारी एक मात्र इच्छा पुत्र प्राप्ति की थी इसलिए मने तुम्हें क्या ही वरदान लिया । अब तुमन जान लिया है कि पुत्र प्राप्ति क्या हाती है । जीवा म हर चाज अनित्य है । सम्पत्ति



स्यास्थ्य परिवार बच्चे सभी क्षणभंगुर स्वप्न व सामान ह । सभी दुःख और बृष्ट उास प्रति माह और इच्छा व परिणाम हैं—यहा तक कि दुःख और बृष्ट भ्राति और भय भी अनित्य है

इसलिए जीवन व असम्य विरोधाभासा म विश्वास करना छोड़ो । विवेक म काम ला । केवल एक सत्य को जान ना और शांति की खोज करो ।

म तुम्हें इष्वरीय नाम का एक पवित्र मंत्र दे रहा हूँ । इस मंत्र का बार-बार पाठ करो और इसम ध्यान लगाया । सयन और एकाग्र मन स ईश्वर का ध्यान करो । इसस तुम सभी प्रकार व दुःखो स उपर उठ जायागे और अनन्त शान्ति प्राप्त करागे ।'

तब मृत बच्चे की आत्मा का महर्षि नारद ने बुलाया और उसस कहा कि वह फिर से मृत शरीर म प्रवण करे, पृथ्वी पर निश्चित अवधि तक जीवन बिनाए और अपने माता पिता का मन प्रसन्न करे ।

लेकिन आत्मा ने उत्तर दिया—

मेरा पिता कौन है मरी मा कौन है मरा न जन्म होता है और न मर्त्यु । म शाश्वत आत्मा हूँ । कम पर निभर आत्मा कई जमा और कई रूपो म भटकती है । शरीर म बदी होने के कारण उमे विभिन्न सासारिक सबधो म से गुजरना पर बाध्य होना पडता है । पर मने तो स्वयं को पहचान लिया है कि म नित्य अजमी और अमर चेतना हूँ । म वही शाश्वत चेतना हूँ जो प्रेम और घणा स अच्छे और बुरे से अहूती और अप्रभावित हूँ । म सनातन साक्षी हूँ म वही हूँ ।

तब वह आत्मा अन्तर्धान हो गई । दुखी माता पिता को मोह और दुःख से मुक्ति मिलती और उन्होंने अपने पुत्र के मृत शरीर का अंतिम सस्कार किया ।

नारद और अमीर के जान स सान्त्वना पाकर राजा चित्रकेतु न इन महर्षियो का साष्टांग प्रणाम किया । वे उमके लिए ऐसा ज्ञान ले कर आए थे जो शांतिदायक था । नारद ने तब उसे समाधि व पवित्र रहस्या म दीक्षित किया और उसे निम्नलिखित प्रार्थना सिखाई—

हम—विनत है आप के सामने
आपका रूप है चरम आनन्दमय ।
आपकी प्रकृति है प्रणामय

आप ह शान्ति स्वरूप, आनन्ददायक
 आप अगोचर है मानवीय चेतना स
 आप निमग्न है अपने ही आनन्द म
 आप अप्रमाणित ह मोह-माया और स्वत सजित माया से
 आप परम पुरुष ह
 और स्वामी ह ऐन्द्रिय और पदार्थ जगत के
 आप के रूप अनन्त ह
 आपको नमन्
 आप अपने अलौकिक स्वरूप म व्यक्त और व्याप्त ह, वहा
 जहा मन और इन्द्रिया पहुच नहीं पाती
 आप निगुण और निराकार ह
 आप ह जीवन और चेतना के प्रतीक कारणो के मूल कारण
 स्वरूप
 आप हमारी रक्षा कर, हमारा पप प्रदशन करे
 सद्व्यापक शून्य की भाति आप सबव्यापक ह सभी म स्थित
 आपको पहचान नहीं पाते ह
 आपकी चेतना से, गहीत प्रकाश से, चेतन जीवन स सत्रिय है*
 आप अनुभव गम्य नहीं इन्द्रिया, मन और बुद्धि स
 प्रायना है आप हमारे हृदय म स्थित रहें हमेशा ।

राजा चित्रवेतु उस आध्यात्मिक ज्ञान के अनुमार अपने जीवन को
 ढालने लगा जो उसे अगीर और नारद जैसे महर्षियो ने दिया था । शीघ्र
 ही उसके मन म ज्ञान का प्रकाश हुआ और उसे प्रेम के देवता के दर्शन
 हुए । उसे अखण्ड आनन्द, शान्ति और सामरस्य की प्राप्ति हुई । धीरे-
 धीरे ज्ञान का प्रकाश भी तीव्रतर होता गया, अन्तत ब्रह्म म उसका
 एकीकरण हो गया ।

*इन्द्रिया, मन और बुद्धि

ठीक वस ही—जम अग्नि के समीप पडा लोहा गम हा जाता है ।

क्षमाशीलता

आकाश म चन्द्रमा वादना क बीचा-बीच धीर धारने चल रहा था । नीचे नदी मगना नृत्य करती हुई बह रही थी, और वायु म उसकी बल-बल की आवाज गूँज रही थी । पृथ्वी माता चन्द्रमा के प्रकाश म सौंदर्य स नहाई हुई दिखती थी । चारा ओर बने ऋषियों क आश्रम इतने मनाहारी थ कि स्वर्गिय उद्यान भी उनके सामने फीक लगते थे । प्रत्येक आश्रम अपन पडो-पूला और वन-गम्पदा गहिन वय मनोहारिता वा अद्वितीय चित्र था ।

इस चन्द्रस्तात राति म ब्रह्मर्षि वांशष्ठ न अपनी पुता अरुघती देवी से कहा— देवी जाग्रो और ऋषि विश्वामित्र स थोडासा नमक लेकर आया ।”

विस्मित होकर उसन उत्तर दिया— मेरे स्वामी ! यह मुझे क्या करन को बह रहे ह ? मैं आपका आशय नहीं समझ सकी । जिसने मेरे सौ पुत्र नष्ट कर दिए उसस इससे आगे उसकी आवाज न निकली । गला रुध गया । अतीत की स्मृतियों ने उसके शात हृदय में हलचल मचा दी । उसे गहन वेदना का अनुभव होने लगा । कुछ देर बाद थाडा सम्भल कर उसने कहा— 'मेरे सौ पुत्र वेदो के विद्वान थे और ईश्वर के सच्चे भक्त थे । वे आज सौ चादनी म ब्रह्म की स्तुति गाते हुए निकला करते थे । लेकिन उसन उन सबको नष्ट कर दिया और आप चाहते हैं कि मैं उसके द्वार पर थोडा-सा नमक मागने के लिए जाऊँ । मर स्वामी ! आपने मुझे असमजस म डाल दिया है ।'

ऋषि का मुलमण्डल धीरे-धीरे प्रकाशयुक्त हो गया । उसने हृदय की गहराइया म म यह शब्द निकले— 'देवी म उसे प्रेम करता हू ।'

अरुघती का असमजस और अधिक बढ गया । यदि आप उसे प्रेम करते होत तो आपने उस ब्रह्मर्षि कहकर सम्बोधित किया होता । क्षण्डा वही समाप्त हो जाता और मेरे सौ पुत्रो का बाल भी बाका न होता ।

ऋषि का मुखमण्डल दैदीप्यमान हो गया। उमन कहा—“चूँकि मैं उसे प्रेम करता था, इसीलिए मैंने उसे ब्रह्मर्षि बह कर नहीं पुकारा, और क्योंकि मैंने उसे ब्रह्मर्षि कहकर नहीं पुकारा इसलिए उमके ब्रह्मर्षि बनने की सम्भावना अभी है।’

विश्वामित्र श्रेय से प्राण-बबूला हो गया था। तपस्या में उसका ध्यान नहीं लग रहा था। उसने प्रतिज्ञा की थी कि यदि वशिष्ठ उस दिन उसे ब्रह्मर्षि के रूप में स्वीकृति नहीं देगा वह उसका वध कर देगा। इस प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए वह हाथ में तलवार लेकर आश्रम से निकल पड़ा था। धीरे-धीरे जब वह ऋषि वशिष्ठ की कुटिया पर पहुँचा तो वह बाहर पड़ा हो भीतर की बातें सुनने लगा। महर्षि जो कुछ देगी अरुघती से कह रहा था, वह सब उसने सुना। यह सोचते हुए तलवार की मूठ पर उसकी पकड़ ढीली हो गयी “हे भगवन, मैं अज्ञान में क्या करने जा रहा था? उस पर आघात करने की सोच रहा था जिसकी आत्मा इन छोटी छोटी बातों से कही ऊपर है।”

उसने अपनी चेतना में सकड़ा मधुमक्खियों के डकों की पीड़ा अनुभव की और दौड़ा हुआ वशिष्ठ के चरणों पर गिर पड़ा। कुछ समय तक वह कुछ न बोल सका। लेकिन कुछ समय बाद उसके बोल फूट पड़े। और उसने कहा— मुझे क्षमा करो, क्षमा करो। लेकिन मैं तो आपकी क्षमा के योग्य भी नहीं हूँ।”

इससे अधिक वह कुछ न बोल सका? क्योंकि अभी उसका अहंकार शेष था। लेकिन वशिष्ठ ने दोनों भुजाएँ आगे बढ़ा कर उस उठाया— ब्रह्मर्षि उठो। उसने धीरे से कहा। लेकिन विश्वामित्र शर्म और मन मन्ताप के कारण वशिष्ठ के कथन पर विश्वास न कर सका।

‘मेरे स्वामी मुझे लाञ्छित मत करो।’ वह बोला।

‘मैं कभी झूठ नहीं बोलता’, वशिष्ठ ने कहा, “आज तुम ब्रह्मर्षि बन गए हो। तुमने यह पद अर्जित किया है क्योंकि तुमने आत्मछन्न से मुक्ति पा ली है।”

‘तब मुझे दैविक ज्ञान दो’, विश्वामित्र ने अनुरोध किया। “मनन्त देव के पास जाओ। वह तुम्हें वही देगा जो तुम चाहते हो।” वशिष्ठ ने कहा।

विश्वामित्र वहाँ पहुँचे जहाँ अनन्तदेव पृथ्वी को गिर पर धारण



किए खड़े थे। "हा, म तुम्हें वही सिखाऊंगा जो तुम सीखना चाहते हो, लेकिन पहले तुम जरा इस पृथ्वी को धारण करो।"

तपस्या से अर्जित शक्ति के अभिमानवश विश्वामित्र ने कहा—
'ठीक है आप अपना बोज़ मेरे ऋधो पर छोड़ दो।'

"अच्छा ता उठाओ," अनन्तदेव ने पीछे हटते हुए कहा और पृथ्वी अतरिक्ष में नीचे ही नीचे जाने लगी।

यहां और अभी म अपनी तपस्या के सभी फलों का परिदवाग करता हू। विश्वामित्र चिल्लाया, केवल पृथ्वी को नीचे न जाने दो।'

रे विश्वामित्र! क्या तुमन इतनी तपस्या भी नहीं की है कि धरती को रोक सको।" अनन्तदेव चिल्लाया, "क्या तुम ऋषि-मुनियों से सम्बद्ध रहे हो अगर तुम रहे हो तो तुमने जो योग्यता प्राप्त की है, उसका प्रमाण दो।

केवल पल भर के लिए म ऋषि वशिष्ठ के साथ था।" विश्वामित्र ने कहा।

'उस सम्पत्ति से अर्जित फलों का दान करो।' अनन्तदेव ने आदेश दिया।

'म उन फलों का दान करता हू।' विश्वामित्र ने कहा। पृथ्वी नीचे जाने से रुक गई।

अब मुझे दैविक ज्ञान दीजिए।" विश्वामित्र ने विनती की।

मूख,' अनन्तदेव ने कहा, तुम मेरे पास दैविक ज्ञान के लिए आए हो उसे भूलकर जिसके पल भर के सम्पत्ति न तुम्हें दैविक ज्ञान के योग्य बना दिया।"

विश्वामित्र इस विचार से प्रोहित हुआ कि ऋषि वशिष्ठ ने उसके साथ छल किया है। इसलिए वह दौटा हुआ ऋधे के पास पहुँच कर पूछा कि उसने उसे क्यों धोखा दिया।

वशिष्ठ न शान्त, धीमे और गरिमापूर्ण ऋधे के पास पहुँच कर मन तुम्हें दैविक ज्ञान दे दिया होना तो तुमन उसे ऋधे के पास जाना। पर अब मुझ में तुम्हारी भास्या हो गई है।

और इस प्रकार विश्वामित्र को ऋषि वशिष्ठ ने दैविक ज्ञान प्रदान कर दिया।

प्राचीन भारत में ऐम ऋषि-मुनि के द्वारा दैविक ज्ञान प्रदान किया गया।

उनका आदश था। उनके पास तपस्या से अर्जित शक्ति इतनी अधिक थी कि वे अपने कंधों पर पृथ्वी को धारण कर सकते थे। आज फिर देश को उस महान पुरषों की जरूरत है जो इस महिमा महित कर दें।

मायावी सरोवर

बारह बप की निश्चित अवधि समाप्त होने को थी। एक दिन की बात है एक मग एक दिन ब्राह्मण की शतघनी (अग्नि प्रज्वलित करने वाली नुडी) से अपना शरीर रगड़ रहा था। जैसे ही मृग जाने को हुआ शतघनी उसके सींगों में फस गई और भयभीत पशु पगलाया सा जंगल की ओर भागा। उन दिनों लोग माचिस से परिचित नहीं थे इसलिए आग को जलाने के लिए पत्थर के दो टुकड़ों को रगड़ कर अग्नि प्रज्वलित की जाती थी। “लो देखो मृग भेरी शतघनी लिए भाग रहा है। अब मैं यहाँ कैसे करूँगा। ब्राह्मण चिल्लाया और मुसीबत की इस घड़ी में सहायता के लिए पाडवों के पास दौड़ा गया।

पाडव पशु के पीछे भागे लेकिन चूँकि वह एक मायावी मृग था, तेजी से दौड़ता हुआ और पाडवों को जंगल में बहुत अंदर तक ले जाकर मायब हो गया। व्यय की इस खोज से थक कर पाडव अत्यधिक निराश होकर एक बट-वृक्ष के नीचे बैठ गए। नकुल न शोकपूर्वक कहा—“हम ब्राह्मण का यह छोटा सा काम भी नहीं कर सके। हमारा कितना पतन हो गया है।”

भीम ने कहा—“सचमुच ऐसा ही हुआ है। जब द्रोपदी को भरी सभा में घसीटा गया तो हम उन दुष्टों को नष्ट कर देना चाहिए था। हमने, चूँकि वसा नहीं किया था उसी के परिणामस्वरूप शायद हम यह बन्धन सहन पड़ रहे हों?” और उसने दुख से अर्जुन की ओर देखा।

अर्जुन भी इस बात से सहमत था। “भने दुःशासन ने अश्लील और अपमानजनक शब्दों को चुपचाप सहाया और कुछ न कर पाया था। इसलिए हम जिस दयनीय अवस्था में पहुँचे हैं उसी के योग्य हैं।”

मुग्धिष्ठिर ने दुख से देखा कि सभी प्रसन्नता और साहस गवा बटे हैं। उसने सोचा यदि इन्हें कोई काम करने के लिए कहा जाए तो यह प्रसन्नता अनुभव करेंगे। प्यास से उमका बुरा हाल था इसलिए उमने नकुल से कहा—

भाई! पेड़ पर चढ़कर जरा देखो कि आसपास कहीं कोई सरावर या तनी है।'

नटुल पेड़ पर चढ़ा। चारों ओर देखा और कहा—'यानी दूरी पर मुझे बगुले और पंखे दिख रहे हैं। वहाँ अवश्य ही जल होगा। -

युधिष्ठिर ने उम जल लाने के लिए भेजा।

नकुल उम जगह पहुँच कर और वहाँ सरोवर देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। वह स्वयं बहुत प्यासा था इसलिए भाई के लिए तरबूत में पानी लाने से पूरा उसने अपनी प्यास बुझानी चाही। लेकिन जैसे ही उसने शीतल जल में हाथ डालना चाहा तभी उसने एक आवाज सुनी—'जल्दी मत करो। यह सरोवर मेरा है। माद्री के पुत्र, पहले मेरे प्रश्नों का उत्तर दो और फिर जल पियो।

नकुल का आश्चर्य हुआ लेकिन तीव्र पিপासा के यन्त्रीभूत उसने चेतावनी की ओर कोई ध्यान नहीं दिया और पानी पी लिया। वह तत्काल बुरी तरह ऊधने लगा फिर गिर पड़ा और मर गया।

नकुल जब काफी दूर तक वापस नहीं लौटा तो युधिष्ठिर ने सहदेव का भेजा कि वह पता लगाए कि बात क्या है। जब सहदेव सरोवर पर पहुँचा तो उसने देखा कि उसका भाई जमीन पर पड़ा हुआ है। उसे नकुल की इस दशा पर आश्चर्य हुआ परन्तु इस सम्बन्ध में अधिक सावधानी से पहले वह अपनी प्यास बुझाने के लिए सरावर की ओर भागा।

आवाज फिर सुनायी दी।

सहदेव! यह मेरा सरोवर है। पहले मेरे प्रश्नों का उत्तर दो और उसके बाद ही तुम अपनी प्यास बुझाओ।

नकुल के समान सहदेव ने भी इस चेतावनी की ओर ध्यान नहीं दिया। उसने पानी पिया और वहीं ढेर हो गया।

सहदेव का न लौट पाने के कारण बहुत चिंतित होकर युधिष्ठिर ने अर्जुन को भेजा कि वह जाकर पता लगाए कि कहीं उसके भाई किसी सकट में तो नहीं फँस गए। तथा उन्हें शीघ्र पानी लाने का आदेश दिया।

अर्जुन तेजी से गया। उसने अपने दोनों भाइयों को सरोवर के समीप मरा हुआ पाया। उन्हें देखकर वह स्तम्भित रह गया। उसे लगा आसपास मड़रा रहा किसी शत्रु ने उन्हें मार डाला है। यद्यपि उसका हृदय दुःख

से और बदले की भावना से जल रहा था, तो भी ये सभी भावनाएँ दुष्ट पिपासा के सामने दब गई थीं। प्यास से दुखी वह भी उस प्राणघातक सरोवर के पास पहुँच गया। वही आवाज फिर मुनायी दी—'पानी पीन स पूव मेरे प्रश्नों का उत्तर दो। यह मेरा सरोवर है। अगर तुम मेरा कहना नहीं मानोगे तो तुम्हारा भी वही दशा होगी जो तुम्हारे भाइयाँ की हुई है।

अजुन के क्रोध की कोई सीमा नहीं थी। वह चिल्लाया—'तुम कौन हो? मेरे सामने आग्रो म तुम्हें मार दूँगा।' और उसने जिधर से आवाज आई थी उस दिशा में नुकीले बाण चलाए। अदृश्य पुष्प घणा से हसा। तुम्हारे बाणों से बेचैन हवा ही घायल होगी। मेरे प्रश्नों का उत्तर दो उसके बाद ही तुम अपनी प्यास बुझा सकते हो। अगर तुमने ऐसा विष विना पानी पिया तो तुम भी मर जाओगे।'

बुरी तरह से परेशान अजुन ने फसला किया कि वह इस मायावी शत्रु का खोज निकालेगा और उससे लड़ेगा। उसके लिए अपनी अदृश्य प्यास बुझाना जरूरी थी। पहले उसे प्यास रूपी शत्रु को मारना होगा इसलिए उमने पानी पी लिया और वही डेर हो गया।

युधिष्ठिर ने आतुरता से प्रतीक्षा के बाद भीम से कहा—'प्रिय भाई, महान योद्धा अजुन भी अभी तक लौट कर नहीं आया। हमारे भाइयों के साथ अवश्य ही कोई भयानक दुघटना हाँ गई होगी क्योंकि भाग्य हमारे साथ नहीं। वृष्या उनकी तलाश जल्दी करो और पानी भी लाना म प्यास से मर रहा हूँ।'

भीम चिन्ता से परेशान, बिना एव भी शत्रु वाल तजी से चल पडे। अपने तीन भाइयों को वहा मरा पडा देखकर अत्यंत दुखी हुआ। उसने सोचा—'यह निश्चय ही यक्षा का काम है। म उन्हें दूक निशालूगा और नष्ट कर दूँगा। पर मुझे बहुत प्यास लगी ह। पानी पीकर म उनका अच्छी तरह लड सकूँगा, इतना कह कर वह सरोवर में उतर गया।

आवाज फिर आयी—'भीमसेन सावधान, मेरे प्रश्नों का उत्तर दो व वाप ही तुम पानी पी सकते हो। यदि तुमने मेरी बात नहीं मानी तो तुम भी मर जाओगे।

'तुम मुझे आदेश देने वाले कौन होते हो?' भीम चिल्लाया। और उसने विरोधी मुद्रा में चारों ओर देखते हुए पानी पिया। जब ही उसने ऐसा पिया उसकी अपार शक्ति क्षीण हो गई और वह भी अपने भाइयों के बीच मृत शरीर गिर पया।

अबेला यधिष्ठिर चिन्ता और प्यास के कारण दुखी था। “क्या कोई दुपटना उनका साथ हा गई है या वे अभी तक पानी की तलाश में जंगल में मारे-मारे घूम रहे हैं या क्या वे प्यास से बेहाश हा गए या मर गए हैं ?”

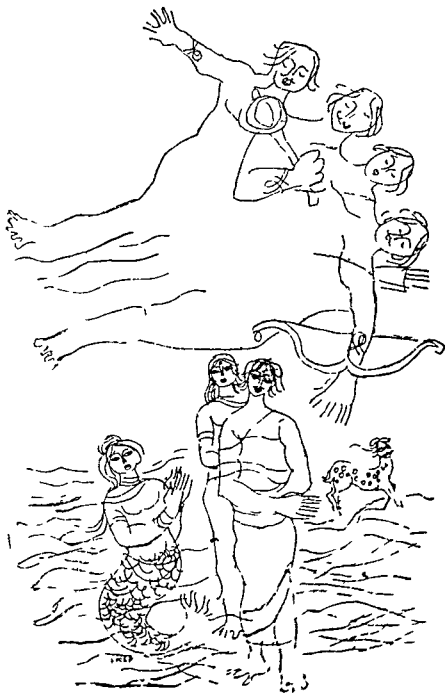
उन विचारों को और अधिक् न सह पाने, और प्यास से व्याकुल हो जाने के कारण वह अपने भाइया और सरोवर की तलाश में निकल पडा। युधिष्ठिर उसी दिशा में चल पडा जिधर उसके भाई गए थे। उस जंगल में जगली सूअर चित-कबर मग और अर्य विशाल जगली जानवर थे। उस जंगल को पार करता हुआ वह एक मुदर सरोवर के पास पहुँचा जहा उस अमृत के समान शीतल स्पर्श तल दिखाई दिया। पर उसने अपने भाइयों को किसी उत्सव के उपरान्त जिधर हुए खम्भों की तरह गिरे हुए पाया। अपने दुख पर काबू न पा सकन के कारण वह रो पडा।

उसने भीम और अर्जुन के जड और निष्क्रिय चेहरों को सहलाया और शोनपूर्ण स्वर में कहा—“क्या हमारे दुखा का यही अन्त होना था। अब जबकि हमारा वनवास खत्म होने को है तुम लोग चले गए हो। मेरे दुर्भाग्य के समय देवता भी मुझे छोड गए हैं।”

जब उमन उनके शक्तिशाली शरीरों को देखा जो अब असहाय पडे थे उसे आश्चर्य हुआ कि ऐसा कौन शक्तिशाली है जिसने उनको नष्ट कर दिया। टूटे स्वर में उसने कहा—‘निश्चय ही मेरा हृदय पत्थर का है जो नकुल और सहृदय को मरा देख कर भी नहीं टटा। मैं अब इस ससार में किसलिए जीवित हूँ तभी उस एक रहस्यभाव ने घेर लिया। यह कोई साधारण घटना नहीं हो सकती। ससार में ऐसे योद्धा नहीं हैं जो उसके भाइयों पर विजय प्राप्त कर सकें साथ ही उनके शरीर पर कहीं घाव के निशान नहीं हैं और उनके चेहरों पर नाद और शांति है। युद्ध में मरे चेहरे एस नहीं होते। किसी दुश्मन के परा के निशान भी नहीं हैं। यह कोई मायावी घटना है या दुर्योधन की कोई चाल है? क्या उसने इस पानी को विपला बना दिया है? तब युधिष्ठिर भी प्यास के बशीभूत सरोवर में उतरा। तभी पहले की सी आवागहीन आवाज न चैतावनी दी—

तुम्हारे भाई मर गए क्योंकि उन्होंने मेरे शब्दों की ओर ध्यान नहीं दिया। तुम उनका अनुसरण मत करा। पहले मेरे प्रश्न का उत्तर दो तभी अपनी प्यास बुझाना। यह सरोवर मेरा है।’

युधिष्ठिर जानता था कि यह शब्द यक्ष के अतिरिक्त किसी के नहीं हो



मकत और उसन अनुमान लगा लिया कि उसक भाण्या क साथ क्या हुआ ह। इग स्थिति स छुटकारा पान का उस सम्भावित माग मिल गया। उसने आकारहीन आवाज से कहा—“कृपया अपने प्रश्न पूछें।

उस आवाज न जल्दी स एव क वाल एव प्रश्न करन शरू कर लिए। उसन पूछा—‘सूय प्रतिदिन किमस चमकता है?’

युधिष्ठिर न उत्तर दिया—‘ब्रह्म की शक्ति स।’

सकट म यकिन की रक्षा कौन करता है?’

सकट म माहस ही व्यक्ति की रक्षा करता ह।’

किम विनास क अध्ययन स यकिन बुद्धिमान बनता है?’

किमी भी शास्त्र का पढ़ने मे व्यक्ति बुद्धिमान नहीं बनता। बुद्धिमान व्यक्तिमा क साहचय स ही व्यक्ति बुद्धिमान बनता है।’

यस ने पूछा—‘पथवी स अधिक धैर्य किस म ह?’

युधिष्ठिर न उत्तर दिया—‘मा में, जो बच्चे का पालन पोषण करती ह—उह पथवी स अधिक महिमामई और धयवान ह।’

‘आसमान स ऊचा क्या है?’

पिता।

वायु स तेज क्या ह?

मन।

तुच्छ तिनके स अधिक तुच्छ क्या है।

दुखग्रस्त हृदय।’

एक यात्री का अच्छा साथी कान ह?

जान।

एक गहस्थ का मित्र कौन ह?

पत्नी।

मौत क समय क्या साथ जाता ह?’

धम केवन धम ही मात के बाद की यात्रा म आत्मा के साथ जाता है।

‘सबस बडा पात्र कौन सा ह।

पथवी ही सबस बडा पात्र ह जा अपन मे सभी को धारण किए हुए है।’

‘सुख क्या ह?’

‘सुख अच्छे आचरण का परिणाम है।’

वह क्या है जिस त्याग देने पर मनुष्य का सभी प्यार करते हैं ?”
अहवार । जिसे त्यागने पर मनुष्य को सभी लाग प्यार करने लगते हैं ।

“वह कौन सी हानि है जिससे दुख के बजाय प्रसन्नता हाती है ?”

‘ब्रह्म जिसकी हानि से दुःख नहीं होता ।’

वह क्या है जिसे छोड़ देने पर व्यक्ति धनी बन जाता है ?”

इच्छा जिस छोड़ देने पर मनुष्य धनी बन जाता है ।’

‘आस्तविक ब्राह्मण कौन है ? उच्च कुल में जन्मा, अच्छे आचरण वाला या ज्ञान वाला ? निणयात्मक उत्तर दो ।

‘जन्म और ज्ञान से कोई ब्राह्मण नहीं बनता, अच्छे आचरण से ही बनता है । कोई व्यक्ति कितना भी जानी क्यो न हो वह तब तक ब्राह्मण नहीं हो सकता जब तक कि वह बुरी आदतों का दास है । चाहे वह चारा वेदों का ज्ञाता हो, बुरे आचरण वाला व्यक्ति निम्न जाति का ही है ।’

‘संसार में सबसे बड़ा चमत्कार क्या है ?”

प्रतिदिन मनुष्य जीवों को यमराज के पास प्रस्थान करते हुए देखता है तो भी वह मरना यहाँ रहने की साक्ष्यता है, सचमुच यही सबसे बड़ा चमत्कार है ।’

इस प्रकार यम ने अनेक प्रश्न किए और युधिष्ठिर ने उन सब के उत्तर दिए ।

अन्त में यक्ष ने पूछा—“ओ राजा ! तुम्हारे मत भाइया में से अब एक का जीवित किया जा सकता है । तुम विसरे जीवित देखना चाहते हो, जमी में प्राण का संचार हो जाएगा ।

युधिष्ठिर ने कुछ पल सोचा और उत्तर दिया— मेष जैसे मुख वाले बकरे जैसे नयना वाले चाड़ी छाती और लम्बी भुजावाले नकुल, जो एक आबनूसी पेड़ की तरह गिर पड़ा है—उठ खड़ा हो ।

यक्ष यह सुन कर प्रसन्न हुआ और युधिष्ठिर से पूछा—‘तुमने भीम को तुलना में, जिनमें सालह हजार हाथियों की शक्ति है, नकुल को क्यों चुना । मैंने सुना है कि भीम से तुम्हें सर्वाधिक प्रेम है । और अर्जुन को क्यों नहीं चुना जिसकी भुजावाली शक्ति तुम्हारी सुरक्षा है ? मुझे बताओ तुमने इन दोनों के बजाय नकुल को क्यों चुना ?”

युधिष्ठिर ने उत्तर दिया—“आ यक्ष ! धर्म ही मनुष्य की ढाल है,

भीम या अर्जुन नहा। अगर धर्म पक्ष ही जाए तो व्यक्ति नष्ट हो जाएगा। कुतो और माद्री भरे पिता की दो पत्निया थी। मैं कुतो का पुत्र जीवित हूँ, इसलिए वह पूरा तरह शोक सतप्त नहीं होगी, 'याय के पक्ष में मने चाहा कि माद्री का पुत्र नकुल जीवित हो जाए।'

यम युधिष्ठिर की निष्पत्तता से बहुत प्रसन्न हुआ और उमने उगरे सभी भाइयों को जिवित कर दिया।

यह मृत्यु का देवता यम था जिसने मृग और यक्ष का रूप धारण किया था ताकि यह युधिष्ठिर की परीक्षा ले सके। उमने युधिष्ठिर का गले लगाया और आशीर्वाद दिया।

यम ने कहा— बनवास की निश्चित अवधि समाप्त होने में अभी कुछ दिन बाकी हैं। तेरहवा साल भी बीत जाएगा। तुम्हारा वार्ड भी शत्रु तुम्हें छोड़ नहीं पाएगा। तुम अपने काम का सफलतापूर्वक पूरा करोगे।

इतना कह कर वह अतर्धान हो गया।

पाण्डवों को यद्यपि बनवास काल में अनेक कष्ट उठाने पड़े, लेकिन बनवास का लाभ भी कम नहीं था। यह समय कठोर अनुशासन और आत्मावलानन का था जिससे वे अधिक शक्तिशाली और अधिक् शालीन हो कर उभर। अर्जुन ने तपस्या करके दिव्य अस्त्रों का प्राप्ति की और इंद्र का सम्पर्क में अधिक शक्तिशाली हो गए। भीम का अपने बड़े भाई हनुमान से उस बोल के पास मिलन हुआ जहाँ सुगन्धिका के फल खिले हुए थे। हनुमान से गले मिल कर उसकी शक्ति दस गुना बढ़ गई। मायावी सरोवर पर धर्म स्वामी अपने पिता यम से मिलकर युधिष्ठिर का प्रभा मडल दस गुना अधिक् चमकने लगा।

युधिष्ठिर के अपने पिता के साथ मिलाप का पवित्र कथा को जा लोग सुनेंगे, उनके मन बर्भी भी पाप की आर नहीं जाएंगे। वे बर्भी नहीं चाहेंगे कि मित्रा के साथ उनके खगडे हो और न ही दूसरों के धन की और देखकर सलजाएंगे, वे बर्भी भी लालच के शिकार नहीं होंगे, वे अनिम चीजों के प्रति अनावश्यक रूप से बर्भी मोहप्रस्त नहीं होंगे।

इस प्रकार वास्यायन ने जमेजय को यक्ष का कथा सुनाई। यह कथा जो हमने सुनाई है उसका वैसा ही फल पाठकों को मिले।

राजा शिवि की कथा

एक समय की बात है एक राजा था जिसका नाम था शिवि राणा । वह बहुत प्रतापी था और उसका प्रताप इतना था कि देवता भी डर स कापते थे कि वही वह उनसे स्वर्ग का राज न छीन ले । एक बार देवताओं को एक चातु मूषी जिससे वे उसके आत्म समय की परीक्षा ले सकते थे । उसे दुबल सिद्ध कर उसका अह्वार तोड़ सकते थे । देवताओं की दृष्टि में देवल वही मनुष्य अजेय है जिसने अपना मन जीत लिया है ।

एक दिन शिवि राणा मत्स्यवाले विशाल वन में बैठे हुए थे— सामन खुला हुआ वरामदा था और दूर तक फैले हुए उद्यान और फव्वारे थे । उनसे ठीक सामने एक श्वेत कबूतर उड़ता हुआ आया जिसका पाछा एक बाज कर रहा था और उसे मारना चाहता था । डर के मारे कबूतर जितनी तेजी से उड़ता था बाज उतनी ही तेजी से उमका पीछा करता । किन्तु उसे ही कबूतर पकड़े जाने को था वह नहा-सा पक्षी शिवि राणा के सिंहासन के पास पहुँच गया । राजा ने बिना किसी हिचकिचाहट के उसे अपने राजसी वस्त्रों में शरण दे दी । वह नहा पक्षी राजा के हृत्पथ से लगेकर हाँफ और काँप रहा था । वह बाज भी सिंहासन के पास आकर रुक गया । उमका पूरा शरीर क्रोध से जल रहा था । उसे देख कर राजा के सिवा अरु सभी लोग काँपने लगे । उस वीरता देख किसी को जरा भी जाश्चय नहीं हुआ ।

‘मेरा शिकार मुझे सौंप दो, उसने ऊँची आवाज में राजा से कह दिया ।

शिवि राजा ने धीरे से कहा, ‘कबूतर मेरी शरण में आ गया है और मैं विश्वासघात नहीं कर सकता ।’

‘क्या ऐसी दया की हो डींग मारते रहते हो ।’ बाज ने तिरस्कारपूर्ण स्वर में कहा—‘जिस कबूतर को आपने शरण दी है वह मेरा भोजन है । आप इसे बचा कर मुझे भूखा मार रहे हो— क्या यही तुम्हारा ‘याप है ।’

नहा बिल्कुल नहा' राजा ने कहा वास्तव म म इसके बन्धन उननी मात्रा में कोई भी ऐसा भोजन दूंगा जा तुम पसंद करोगे।

कोई भी भोजन।' बाज ने उपहास करते हुए कहा—'मान तो म तुम्हार शरीर का मास मागू तो ।”

म अपने शरीर का मास दे दूंगा। शिवि राणा ने दडता-पूक कहा।

पक्षी की भयानक हसी से बक्ष गूज उठा। सिंहासन के समीप खड सभी लोग चौंक गए। जब उन्होंने दुबारा पक्षी की ओर देखा तो उन्होंने पाया कि पक्षी की आँखें पहले की तरह चौकड़ा और तेज ह।

तब म चाहूंगा उसने धीमे और दढ स्वर म कहा—'इस कबूतर का तराजू म रखकर इसके बराबर राजा का मान तोला जाए।

ऐसा ही होगा शिवि राणा न तराजू की ओर संकेत करते हुए कहा।

रुका बाज ने कहा मास केवल शरीर के दायी ओर स हा काटना होगा।

यह भी स्वीकार है राजा ने मुस्कराते हुए कहा।

तुम्हारी पत्नी और पुत्र भी बलिदान के समय उपस्थित रहेंगे।'

रानी और मेरे पुत्र को ले आओ। राजा ने एक अधिकारी से कहा।

इस प्रकार सभी लोग अपने-अपने स्थान पर बैठ गए। तराजू लाया गया। उसमें एक ओर कबूतर रखा गया। बधिक ने दुःखी जानेश को पूरा करना शुल्क किया परन्तु सभी सभासदा ने आश्चर्यचकित होकर देखा कि बधिक जितना भी मास काट-काट कर दूसरे पलडे पर रखता गया कबूतर भारी ही रहा और दोनो पलडे बराबर न हो पाए।

तब अन्तत शिवि राणा की बाईं आख से आसू टपका।

रुका जाओ बाज गरजा 'म अनिच्छित बलि नहीं चाहता। तुम्हारे आसू उपहार के मूल्य का नष्ट कर देंगे।

'नहीं मेरे मित्र ऐसा नहीं है' राजा ने बाज की तरफ मुडते हुए प्रसन्नता और नम्रता से कहा— नही तुम्हें ध्रम हुआ है। मेरा वाम अंग इसलिए रोया है क्योकि निबलो एव असहायी की सहायता का सौभाग्य केवल दायी पक्ष ही प्राप्त कर रहा है।



यह शत्रु मुन कर सभी उपस्थित लाग चौक पड़े। बाज और बबूतर अन्तर्ग्राम ह्रा गग धे और उनके स्थान पर देवताआ क राजा इद्र और अग्नि देव चडे थे।

इद्र की आवाज म गहरा सम्मान ममाया हुआ था जब उहाने कहा — शिवि राणा की महानता की तुलना म देवता व्यथ ही मपप करत रहेंगे। अमहाया के सहायक, बलिदान के आनन्द से तेजादीप्त आ राजा। हम तुम्हें आशीर्वाद दते ह। ऐसी आत्माआ क प्रति देवताआ का नमस्कार करना चाहिए। तौर उहें अपन से भी ऊधी पदवी प्रदान करनी चाहिए।

(सिस्टर निवदिता)

चन्द्रमा मे खरगोश

बहुत सान पहले उस देश में जहाँ महात्मा बुद्ध का जन्म हुआ था, एक घन पर्वतीय जगल में एक बन्दर एक सोमडी पीर एवं खरगोश रहते थे। तीना घनिष्ठ मित्र थे और बहुत प्यार से इकट्ठे रहते थे। एक बार भगवान् भिखारी के वेश में स्वयं से धरती पर उतरे। वे गण्डो कम्बा और शहरा वा भ्रमण करते रहे परन्तु लोग वा व्यवहार उनके प्रति सम्भावपूर्ण नहीं था। सागा ने उन्हें कुछ नहीं दिया। सरोग स उन्होंने एक साथी भिखारी से जगल के तीन पशु मिनो के बारे में सुना और उन्होंने वहाँ जाने का फैसला कर लिया। जगल की सीमा पर एक बड़ा पत्थर पड़ा था। भूखा और थका हुआ होने के कारण भिखारी वहाँ आराम करने के लिए बठ गया। तभी बन्दर सोमडी पीर खरगोश जगल से बाहर आए। भिखारी ने उनसे कहा— मेरे मित्रों मुझ पर दया करो। मैं बहुत गरीब हूँ और मने एवं सम्पत्तियों से कुछ नहीं खाया। मैंने सुना है कि मनुष्यों की अपेक्षा तुम्हारा व्यवहार अधिक मित्रतापूर्ण एवं दयापूर्ण है। इसलिए मेरी सहायता करो।”

यह सुनकर तीना मित्र उम निर्धन मनुष्य के लिए दयागं हो गए। बन्दर तेजी से भागा हुआ गया, और जगल में से अनेक प्रकार के फल तोड़ लाया और भिखारी को दिए। सोमडी पास की एक नदी पर दौड़ी वह वहाँ से कुछ मछलियाँ पकड़ लाई और गरीब भिखारी को दे दी। खरगोश जगल के एक कोने से दूसरे कोने तक भागता रहा लेकिन खापी हाथ लौट आया।

भिखारी ने यह देखकर खरगोश से कहा—‘खरगोश! मैंने सुना था कि आप भी बन्दर की तरह मत्रीपूर्ण और सोमडी की तरह सहायक हों, वृषया मेरे लिए कुछ लाओ।’

“क्षमा कीजिए महादय, खरगोश ने कहा “मुझे आपसे प्रति सहानुभूति है और अपने मित्रों के समान मुझे भी आप पर दया आ



रही है। पर म क्या कर सकता हूँ। मुझमें वह प्रतिभा और बुद्धिमत्ता नहीं है जसी कि उनमें है—और इससे मैं बहुत दुखी हूँ।

यह कहने की देर थी कि खरगोश का भाव बदल गया। लगता था जैसे वह गहराई से किसी बात पर माच रहा था। और तब अचानक उसने निणय लिया। —“भेरे मित्रों” उसने बदर और लोमड़ी से कहा—‘जल्दी करो और जंगल से सूखी घास ले आओ और उमो यहाँ इकट्ठी करो।

दोस्तों न बसा ही किया और वहाँ इधन का ढेर लगा दिया। तब खरगोश ने लोमड़ी से कहा कि वह आग जला दे।

यह हो जाने पर उसने अपने दोनों मित्रों का गले लगाया और उनको पता चलने से पहले ही अचानक भिखारी का यह कहते हुए वह सपटो में कूद पड़ा— प्रिय पथिव, मैं आपके लिए कुछ न कर सका भेरा शरीर ठीक तरह से भुजा जान पर कृपया आप उस निकाल कर खा लें।’

भिखारी हक्का-बक्का रह गया और उस निरीह तथा भोले खरगोश के लिए उसका हृदय भर जाया। खरगोश के अघजले शरीर को अग्नि में से निकाल कर उसने हृदय से लगा लिया। बदर और लोमड़ी को आश्चर्य में डूबा छोड़ कर भिखारी खरगोश को लेकर आकाश में चला गया। भगवान ने चंद्रमा में एक विशाल भवन बनवाया और उसे खरगोश का दे लिया जिसने निस्वाथ भाव से अपनी बलि दी थी। तभी म खरगोश चंद्रमा में लिखाई पड़ता है।

अनुसरणीय चरण-चिन्ह

(1) पावती की अनुकंपा

हिमानय की पुत्रा देवी पावती ने कठिन तपस्या करके भगवान शंकर को पति रूप में प्राप्त किया था। भगवान शंकर ने प्रसन्न होकर उन्हें दशन लिए थे और पावता ने उन्हें पति रूप में वरा था। उसके बाद शंकर अतर्धान हो गए थे। पावती आश्रम के बाहर एक झिला पर बठी हुई थी। तभी उसने मुसीबत में पड़े एक बच्चे की चीख सुनी। बच्चा चिल्ला रहा था 'ओह! मैं बच्चा हूँ और मुझे ग्राह न पकड़ लिया है। यह मुझे निगल जाएगा। मैं अपने माता पिता का इकतीना वेता हूँ। दौनो, और मुझे बचाओ। ओह! मैं मर रहा हूँ।'

बच्चे की चीख सुनकर पावता, तत्काल उस स्थान पर पहुँची और उसने देखा कि निकटवर्ती झील में ग्राह न एक मुठ्ठर जानवर को दबाया हुआ है। ग्राह न जब पावती को देखा तो वह बच्चे का दबाये हुए तेंजी में झील के मध्य में चला गया। बच्चा सचमुच बहुत सुन्दर था, पर ग्राह की गिरफ्त में जन्म होने के कारण वह घुरी तरह में रा रहा था। बच्चे का कष्ट देख कर पावती का हृदय द्रविण हो उठा। उसने कहा 'हे ग्राहाराज! बच्चा बहुत कष्ट में है कृपया इस तत्काल छोड़ दें।' ग्राह न उत्तर दिया 'देवा! दिन के छोटे पहर में जो भी मर निकट आता है वह मरा भाजन बनता है। बच्चा इस कालावधि में मर पाया है और इस प्रकार ग्राह न इस मर भाजन का निमित्त बना कर भजा है। मैं इसे छोड़ नहीं सकता। देवी पावती ने कहा 'हे ग्राहाराज मैं आपसे मामन विनत हूँ। मैं हिमालय की चाटी पर बठ कर कठिन तपस्या की है। उसका ध्यान में रखकर बच्चे को छोड़ दें। ग्राहाराज ने कहा— कृपया अपनी कठिन तपस्या का फल मुझे दे दें मैं बच्चे का छोड़ दूंगा। पावता ने उत्तर दिया 'हे ग्राहाराज, तपस्या का फल ही नहीं मैं ममस्त जीवन का श्रेय आपका अर्पित करती हूँ। आप बच्चे को छोड़ें'



द।' पावती का इतना कहना भर था कि ग्राह का शरीर तपस्या में प्रकाश से देदीप्यमान हो उठा। उसका शरीर दोपहर के सूर्य की ज्वाला में मोम के समान जलने लगा। ग्राह न कहा 'देवो! यह आपने क्या किया। जरा सोचा। कितनी कठिनाई से जीर कितने उच्च उद्देश्य से आपने यह तपस्या की थी। ऐसी तपस्या के फल का छोड़ देना आपके लिए उचित नहीं है। खर ब्राह्मणा व प्रति आपकी निष्ठा और दुखिया व प्रति आपके सदा भाव को देखकर मैं बहुत सन्तुष्ट हूँ। मैं तुम्हें वरदान देता हूँ 'अपन तप के फल और वच्चे को वापस ले लो।' इस पर पावती ने भक्ति भाव से कहा 'हे ग्राह राज! यह मेरा कतव्य था कि इस गरीब ब्राह्मण वच्चे को अपन प्राण दकर भा बचाती। तपस्या फिर भी हो सकती है पर यह वच्चा दावारा नहीं मिल सकता था। मने हर बात पर विचार करके ही इस वच्चे को बचाया है और अपनी तपस्या आपको अर्पित की है। मैं जा चीज दे चुकी हूँ, वह वापस नहीं हा सकती। केवल इस वच्चे का छोड़ दो।' यह सुन कर आर वच्चे को बहा छोड़ कर ग्राह अरुधर्मान हो गया। पावती ने पुन तपस्या करनी शुरु की—यह सोचत हुए कि उसकी पहले की तपस्या नष्ट हो चुकी है। इस पर भगवान शंकर ने उन्हें दशन दिए जीर कहा 'मैं ही वच्चा था और मैं ही ग्राह था। तुम्हारी अनुकम्पा और बलिदान की महिमा को देखने के लिए हा मने यह त्रीडा की था। देखा, तुम्हारे बलिदान के परिणामस्वरूप तुम्हारी तपस्या का मूल्य हजार गुणा बढ़ गया है।

(2) माँ का हृदय

अजुन न जश्वरथामा को जो उसके गुरु का पुत्र था और जिसने उस व पांच पुत्रों की सुप्तावस्था में हत्या कर दी थी, द्रौपदी व सामन प्रस्तुत किया। द्रौपदी ने अश्वत्थामा की आर देखा और उसका श्राध तत्काल शांत हा गया। माँ का हृदय अनुकंपा से भर उठा और द्रौपदी ने अजुन से कहा—'मैंर स्वामा इस मुक्त कर दो। मुझे इसकी जान नहीं चाहिए। यह तुम्हारे गुरु का पुत्र है। अगर यह मार दिया गया तो इसकी माता तुम्हारे गुरु की पत्नी। अपने पुत्र की मृत्यु पर वसे ही शोक मैं डूब जाएगा जमे मैं अपने पांच पुत्रों के मरण पर शोक सतप्त हूँ। मेरे पुत्र पुन त्रीवित



नहीं हो सकते। इसलिए मैं सिर्फ अपना बदला लेने के लिए किसी माँ का अपने समान दुखी नहीं बना सकता। मैं इस शमा करती हूँ। तुम्हें भी इसे धमा कर देना चाहिए।

(3) सुख दुख का साथी

शिकारी ने एक विपला बाण मृग पर चलाया। निशाणा चूँक जाने से उस बाण ने एक बड़े पेड़ को बँध लिया। विपल का असर पेड़ पर तत्काल हुआ। उसके पत्त शड गए और सूखने लगे। एक लम्बे अरसे से एक ताता उस पेड़ की छाँवल में रह रहा था। पेड़ के साथ उसे मोह था, इसलिए उसने पेड़ को नहीं छोड़ा। उसने खोखल से बाहर आना छोड़ दिया और इस तरह खाने-पीने के लिए कुछ भी न मिल पाने की वजह से सूख कर काटा हो गया। तोते ने सकल्प कर लिया कि वह भी अपने साथी पेड़ के साथ मर जाएगा। उसकी उदारता, सहनशक्ति सुख दुख में समरसता और आत्मबलिदान की भावना ने पूरे वातावरण का बदल दिया। इंद्र का ध्यान उसकी आर खिंचा और उन्होंने उसे दशन दिए। तोते ने इंद्र का पहचान लिया। इस पर इंद्र ने कहा "प्रिय तोते! इस पेड़ पर न पत्ते हैं न फल। अब इस पर कोई पत्ती नहीं बढ़ता। यहाँ निकट ही विशाल जंगल है जहाँ हजारों सुंदर पेड़ हैं जो फूल-पत्ता से लदे हैं और रहने योग्य असदृश पत्ता से ढकी टहनियाँ हैं। यह पेड़ अब खत्म होने को है। इस पर अब फूल-फल नहीं होंगे। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए तुम इस मुरझाए हुए पेड़ को छोड़ कर किसी हरे-भरे पेड़ पर क्यों नहीं चले जाते? तोते ने पेड़ के प्रति सद्गानुभूतिपूर्ण शब्दों में उत्तर दिया— हे इंद्र मेरा जन्म इस पेड़ पर हुआ था और यही मैं बड़ा हुआ। यहाँ रहते हुए मैंने कई अच्छी बातें सीखीं। जब मैं बच्चा था तो इस पेड़ ने मेरी देखभाल की। इसने मुझे खाने के लिए भीड़े फल दिए और मुझे शत्रुओं के आक्रमण से बचाया। अब मैं अपनी प्रसन्नता के लिए इसे इस दीन हालत में छोड़ कर कहा जाऊँ? मैं चूँकि इसके साथ खुशावादी है तो अब मैं इसके साथ कष्ट भी सहूँगा। देवताओं के स्वामी होने पर भी आप मुझे गलत शिक्षा क्यों दे रहे हैं? यह पेड़ जब मजबूत और समृद्ध था तो मैंने इसकी छाया में अपनी जिदगी बिताई। अब जब कि यह अशक्त और नष्टप्राय है यह



कैसे सम्भव है कि मैं इसे भाग्य के सहारे छोड़ कर चला जाऊँ।”

ताते के इन स्नेहसिक्त, मधुर और आकषक शब्दों का सुन कर इंद्र बहुत प्रसन्न हुए। वह द्रवित हो गए और उन्होंने ताते से कहा “प्रिय तात ! मुझसे जो चाहो वरदान मागो। तात ने उत्तर दिया “आप मुझे वरदान देना ही चाहते हैं तो यह दीजिए कि यह पेड़, जो मुझे बहुत प्रिय है फिर से पहले की तरह हरा भरा हो जाए। पेड़ की नई शाखाएँ पत्तों और फलों उग आएँ। पेड़ पहले की तरह हरा भरा हुआ गया और निश्चित जीवन अवधि समाप्त हो जाने पर अपने आदर्श व्यवहार के प्रतिदान स्वरूप ताते को स्वर्ग की प्राप्ति हुई।

(4) मानसिक सतुलन की परीक्षा

‘नामू! तुम्हारी धोती पर खून के घट्टे क्या हैं?’ ‘मा, मैं कुल्हाड़ी से टांग छीलन की कोशिश की थी।’

मा ने धोती परे हटाते हुए देखा कि टांग की चमड़ी और मांस छिला हुआ है। नामदेव इस प्रकार चल रहा था जैसे कुछ भी न हुआ हो।

“तुम बहुत मूर्ख हो — नामदेव की मा ने कहा। ‘क्या कोई कुल्हाड़ी से अपनी टांग छील डालता है?’ अगर टांग टूट जाए तो व्यक्ति लगडा हो जाएगा और यदि घाव विपाक हो गया तो टांग कटवानी भी पड़ सकती है।

‘ऐसे तो पेड़ का भी कुल्हाड़ी से जल्मी हो जाना चाहिए था।’ अभी उस दिन मैं आपकी आना पाकर कुल्हाड़ी से पलाश वृक्ष के तने की छाल छील कर लाया था। तभी मुझे लगा कि मैं अपनी टांग की चमड़ी छील कर देखूँ कि क्या महसूस होता है। मा, मैंने यह इसलिए किया ताकि मैं जान सकूँ कि पलाश वृक्ष को क्या महसूस हुआ होगा।

नामदेव की मा को याद आया कि एक दिन उमने बाड़ा बनाने के लिए उसे पलाश वृक्ष की थोड़ी सी छाल लाने के लिए भेजा था। नामदेव की मा गदगद हो उठी और बोली, प्रिय नामू! लगता है तू महान साधु बनेगा। पेड़ तथा अन्य जीवों में भी वैसा ही चेतन तत्व है जसा मनुष्या में। जैसे हम घायल होने पर पीड़ा का अनुभव करते हैं वैसे ही ये भी।

कालांतर में यही नामू नामदेव के नाम से प्रसिद्ध हुआ।



(5) श्वेत शिशु हाथी

बात उम समय की है जब बनारस में राजा ब्रह्मन्त राज दरना था। वहाँ पाच सा बढी रहत थे। व नौका स नगी पार करके जगल में मकान बनाने वाले प्मारस्ती काष्ठ खण्डा को काटने के लिए जाते। काष्ठ खड काट लेने के बाद वे उह एक मजिले मकाना के उपयक्त तयार करते। वही उन पर खेमा के निमित्त निशान लगात। तब व उन शहतीरा का नदी पर ले जाते। जब नौका भर जाता ता व शहर में आत और भवन बनाने के इच्छुक लागे का शहतीर बेच दग। पस मिल जान पर वे फिर भवन निर्माण हेतु काष्ठ खण्डा को काटने के लिए उसी जगह पहुच जाते।

इस प्रकार अपनी आजीविका कमाते हुए एक बार उहाने लकडकोट बना कर डेरा डाल लिया। उनस थाथी दूरी पर ही बबूल की लकड़ी की एक बडी सी किरच पर एव हाथी का पाव पड गया। किरच उसत्र पाव को चरती हुइ अदर तक धस गइ। इसमें उसे बहुत पीडा होने लगी। क्याकि पाव में जलन होन लगी थी आर प व पड गयी थी। विचार हाथी का दद स बुरा हाल था। एक दिन जब उसन लकडी के कटने की आवाज सुनी तो उसन सोचा, 'अगर मैं इन बढइया के पास जाऊ तो शायद मुचे कुछ आराम मिल जाए। और वह तीन टागा पर लग डाता हुआ उस दिशा की ओर चल पडा और उनके समीप जा कर रुक गया।

बढइया ने जैसे ही उसका सूजा हुआ पाव और उसमें धसी हुई बडी सी किरच देखी तो उहान तज कुल्हाडा स किरच का चारा आर से काट कर और उसके गिद रस्सी लपेट कर उस खाचनर निकाला। तन उहाने घाव में स पीव साफ की। उसे गम पानी स धाया उसपर जडी वूटी का लेप किया। कुछ ही समय बाद घाव ठीक हा गया।

अब हाथी ठीक हा गया तो उसन साचा 'मेरी जिन्दगी इन बढइयो ने बभाई है। प्रतिदान में इहे कुछ देना चाहिए।

उस दिन के बाद वह हाथी वन का समूत उधान में उन लोग की सहायता करता और जब वृक्ष काट लिए जाते तो वह उह इकट्ठा करता। उनका कुल्हाडिया और उनके सामान को अपनी सूड में लपेट कर ले आता। भोजन के वक्त पाच सौ बढइया में से प्रत्येक उसे एक एक घ्रास देता।

इस हाथी का एक बेटा था—गिल्लुल श्वेत—एक राजसी शिशु

हाथा। उसने सोचा, 'म बूढ़ा हा चुका हू क्या न म इसे इनके नाम के लिए इन्हें साप दू, और स्वयं यहाँ म चला जाऊँ।

इस प्रकार सकल्प करके और उन लोगों को बताए बिना वह जंगल म गया। वहाँ से अपने बंदे को साथ ले आया और उन लोगों से कहा, 'यह शिशु हाथी मेरा बेटा है। आप लोग ने मेरा जीवन की रक्षा की है इसलिए म इसे बतौर चिब्रिस्सक की फीस के आपका सापता हू। आज के बाद मैं यह आपकी सेवा करेगा। अपने पुत्र को संवोधित करत हुए उसने कहा 'आज मे तम इन लोगों का यह सारा काम करना जो म करता था।'

उस प्रकार उमन अपना बेटा उन लोगों के साप दिया और जंगल म गम हो गया।

उम दिन से शिशु हाथी उन लोगों के आदेशों का पालन करता। जो कुछ उस करन के लिए कहा जाता वह करता और वे लोग उम भोजन देते। जब काम खत्म हो जाता तो वह नदी की ओर चला जाता, वहाँ घेनता रहता और फिर वापस आ जाता। बढइया के बच्चे उमकी सूँड, पूँछ और टांगो पर चढ़ जाते, उसके साथ धरती पर और जंगल म घेनता करते।

प्रनारस के राजा ने जब इस श्वेत हाथी के बारे म सुना और चिब्रि श्वेत हाथी मिलने सिग्न ह उसकी इच्छा हुई कि इस हाथी का प्राप्त किया जाए। इसलिए वह अपने मन्त्रिया सहित नौकाओं म चढ कर बढइया के गाँव में आया। उग समय हाथी नदी में घेनारत था जब उसने बोल-नगाडो की आवाज सुनी तो वह दौड़ कर बढइयो के पास आ गया। बढइ राजा के पास आए और उन्होंने कहा "महामहिम! यदि केवल लकड़ी का प्रश्न था तो आप का यहाँ चल कर आने की क्या आवश्यकता थी? क्या इसके लिए इतना काफी न होता कि किसी को भेज दते?"

राजा न उत्तर दिया, 'म तुम्हें विश्वास दिलाता हू कि म लकड़ी के लिए नहीं बल्कि इस हाथी के लिए आया हू। उन लोगों ने कहा, महामहिम! आप प्रसन्नतापूर्वक उसे स्वीकार करें और अपने साथ ले जाएँ।

लेकिन शिशु हाथी हिला तक नहीं।

राजा ने उगे कहा, 'तुम मुझ से क्या चाहत हो? हाथी न उत्तर दिया, 'मरे स्वामी, आप आदेश दें कि मेरा मूल्य बढइया को दे दिया जाए।'

यह ठीक है' राजा न कहा और अपने हाथों का आदेश दिया कि वे हाथी की सूड़ से लेकर पूछ तक लाखा रुपये का डेर लगा द।

पर इस पर भी हाथी इनके साथ चलने को तैयार न हुआ।

तब राजा ने आदेश दिया कि प्रत्येक बड़ई को और उन की पत्नियों को अपनी वेशभूषा तैयार करने के लिए कपड़े दिए जाए तथा उनके बच्चों का विशेष उपहार के तौर पर वस्त्र दिए जाए जो उसके साथ खेलते रहे ह। तब हाथी चलने के लिए तैयार हो गया। राजा के साथ जाता हुआ वह बार-बार मुड़कर वापस, उनकी पत्नियों और बच्चों को देखता रहा।

राजा उसे शहर में ले आया। मारे शहर और हाथियों के रहने के स्थान को अच्छी तरह से सजाया गया। शिशु हाथी को सुंदर झालरो से सजाया गया था। राजा ने तब उसका अभिषेक किया और उसे केवल अपनी सवारी के लिए अलग रखा। राजा ने उसके साथ सचमुच एक साथी का सा व्यवहार किया।

राजा को जब से हाथी की प्राप्ति हुई थी, तब से वह भारतवर्ष की संपूर्ण शक्ति का स्वामी बन गया था। कालांतर में राजा की बड़ी रानी के गर्भ से पुत्र के रूप में बोधिसत्व ने जन्म लेना था। लेकिन राजा पुत्र जन्म से पूर्व ही मर गया। यदि हाथी को इस बात का पता चल जाता कि राजा मर गया है तो उसका हृदय तत्काल टूट जाता। इसलिए किसी न उस यह दुःखद समाचार नहीं सुनाया।

पड़ोसी राजा कौशल नरेश ने जब यह समाचार सुना तो उसने कहा

देश नेतृत्वहीन है', इसलिए उसने विशाल सेना ले कर राजधानी का घेर लिया। नागरिका ने द्वार बंद कर लिए और यह संदेश कौशल नरेश को भेजा, हम राजा के उत्तराधिकारी के जन्म की प्रतीक्षा कर रहे ह। यदि सात दिन के अंदर राजकुमार का जन्म हुआ तो हम तुम्हारे साथ युद्ध करेंगे और यदि राजकुमार का जन्म न हुआ तो हम राज्य आपका दे देंगे। अतः सात दिन के बाद आना। कौशल नरेश इस बात पर सहमत हो गया।

सातवें दिन राजकुमार का जन्म हुआ और उस दिन से नागरिक कौशल नरेश से युद्ध करने लगे। लेकिन चूंकि युद्ध में उनका कोई सेनापति नहीं था इसलिए उनकी सेनाओं को महान होने के बावजूद, धीरे-धीरे पीछे हटना पडा।



इस स्थिति को देखने हुए मत्रिया ने रानी से कहा "अगर हम इसी तरह पीछे हटते गए तो हमें डर है कि हमारी सेना पराजित हो जाएगी। राजा का मित्र श्वेत हाथी यह नहीं जानता कि राजा मर गया है और न ही वह यह जानता है कि पुत्र का जन्म हुआ है, न ही यह कि कौशल नरेश ने हमारे विरुद्ध युद्ध छेड़ा हुआ है। उसे यह सब बता देना चाहिए।"

रानी सहमत हो गई। राजकुमार को राजसी वेपभूषा में, रेशमी गद्दी पर बठा दिया गया। तब रानी अपने मत्रिया सहित महल से निकल कर हाथिया के रहने के स्थान पर आई और नहें राजकुमार का श्वेत हाथी के चरणों में रख दिया और कहा, "महोदय, आपके मित्र का स्वगदास हो चुका है। हमने आपको यह तथ्य नहीं बताया क्योंकि हमें डर था कि यह खबर सुनकर वही आपका दिल न टूट जाए। यह आपके मित्र का बेटा है। कौशल नरेश ने नगर का घेर लिया है और मेरे पुत्र के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया है। हमारी सेना हार रही है या तो मेरे पुत्र को मार दो या फिर उसके लिए राज्य का पुनः प्राप्त करो।"

तब हाथी ने नन्हें राजकुमार को अपनी सूँ से सहलाया और अपने साथे तक उसे उठाया। यह राजा के विद्योग में बहुत रोया। तब उस नन्हें राजकुमार को रानी की गाँव में रखते हुए बोला, "म कौशल नरेश को पकड़ूंगा" और यह कह कर अपने स्थान से बाहर आ गया।

मत्रियो ने तब उसे अस्त्र शस्त्रों तथा आभूषणों से विभूषित किया। अब वे शहर के द्वार खाल कर बाहर आ गए। हाथी दौड़ कर शहर से बाहर निकला और अपने ऊँचे गजन से शत्रु की सेना को भयभीत करता हुआ उनके डेरे पर टूट पड़ा और उसे तितर बितर कर दिया।

तब वह कौशल नरेश का छोटी से पकड़ कर खीचता हुआ लाया और उसे नहें राजकुमार के सामने पटक दिया। बहुत से लोग राजा को मारने के लिए दौड़े परन्तु हाथी ने उन्हें मना करते हुए राजा से कहा "आगे से सावधान रहना और यह समझना कि हमारा राजकुमार एक नन्हा सा बालक है।"

इस प्रकार चेतावनी देकर उसे मुक्त कर दिया। उस दिन से भारतवर्ष की समस्त शक्ति बोधिसत्व के हाथ में रही और कोई उसके सामने खिर न उठा सका। सातवें वष के अन्त में बोधिसत्व का राजा के रूप में अभिषेक हुआ। जीवनभर वायभूवक राज्य करने के बाद उस स्वर्ग की प्राप्ति हुई।

